शोध पत्रों को प्रकाशित करने के लिए विधि मान्य आई.एस.एस.एन २३२१-६६४५

विश्व स्नेह समाज

वर्ष 17, अंक 6-7, मार्च-अप्रैल 2018

एक रचनात्मक क्रान्ति

काव्य सम्राट प्रतियोगिता-18 की अंतिम तिथि अब 15 नवम्बर 2018 तक

इस प्रतियोगिता में किसी भी उम्र का कोई भी हिन्दी भाषी प्रतिभागी बन सकता है। यह प्रतियोगिता तीन चरणों में सम्पन्न होगी। अंतिम चरण में सर्वश्रेष्ठ प्रतिभागी को ही काव्य सम्राट की उपाधि व नगद ११०००/रुपये प्रदान किए जाएंगे।

नियम एवं शर्तें:

०१ इस प्रतियोगिता के लिए किसी भी उम्र का कवि/रचनाकार प्रतिभागी बन सकता है।

०२ प्रतियोगिता तीन चरणों में होगी। प्रथम चरण में शामिल सभी रचनाकारों की रचनाओं को पुस्तकाकार में प्रकाशित किया जाएगा। जिसकी एक प्रति साधारण डाक से प्रतिभागी को भी प्रेषित की जाएगी।

०३ पाठकों की राय के आधार पर द्वितीय चरण के लिए केवल २१ रचनाकारों का चयन किया जाएगा। त्रिस्तरीय निर्णायक मंडल द्वारा रचनाओं का स्तर, शैली, शब्द रचना को देखकर तृतीय चरण के लिए ११ रचनाकारों का चयन किया जाएगा।

०४ तृतीय चरण में चयनित रचनाकारों को स्वयं उपस्थित होकर काव्य पाठ करना होगा। तीसरे चरण के सभी प्रतिभागियों को प्रमाणपत्र दिया जायेगा। प्रत्येक चरण में विजयी प्रतिभागियों को सूचना मोबाइल संदेश/ व्हाटसऐप/ ईमेल से दी जाएगी।

०५ सर्वश्रेष्ठ/विजेता को काव्य सम्राट की उपाधि, व नगद राशि व उपहार दिया जाएगा।

०६ प्रतिभागी को मौलिकता दर्शाते हुए एक रचना के साथ एक फोटो, नाम, पिता का नाम, जन्म तिथि, पता, ईमेल/व्हाटसएप नंबर, दूरभाष भेजनी होगी तथा रुपये दो सौ का धनादेश/चेक/डीडी 'सचिव, विश्व हिन्दी साहित्य सेवा संस्थान, इलाहाबाद' के नाम से भेजनी होगी।

आवेदन की अंतिम तिथि १५ नवम्बर २०१८

सचिव, विश्व हिन्दी साहित्य सेवा संस्थान,

६५ए/२, रामचन्द्र मिशन रोड, लक्सों कंपनी के सामने, मुण्डेरा,

इलाहाबाद-211011, सं०: (वाट्सऐप) 9335155949, 9264964112

sahityaseva@rediffmail.com, hindiseva15@gmail.com

कल, आज और कल भी बहुपयोगी मासिक, वर्षः17, अंकः7 मार्च 2018

विश्व स्नेह समाज

हे प्रभु! अगले जन्म मुझे बिटिया ना किजो

स्त्री का पुरुष से भिन्नता ही उसकी शक्ति है, उसकी खूबसूरती है. इसे उसे अपनी शक्ति के रूप में स्वीकार करना होगा, कमजोरी बना कर नहीं.

खूबसूरती हमारी शक्ति है

इस अंक में......

संवेदनहीन होता समाज 10
सांस्कारिक पतन के जिम्मेदार 11
महिलाओं का सामाजिक उत्थान व पतन 12
आधी आबादी और जी.एस.टी. 17

स्थायी स्तम्भ

प्रेरक प्रसंग, अपनी बातः महिलायें अपने आप से छलावा..... 04–06
शोध आलेख-मराठी और हिंदी दलित आत्मकथाओं में स्त्री चिंतन 14
अध्यात्म-मन क्या है? 16
हिन्दीतर भाषी रचनाकार- चिंतन-लैगिंक हिंसा-मनोसामाजिक प्ररिप्रेक्ष्य-19
कविताएं- मैं भूत बनकर आऊंगी-ऋचा जैन जिंद, एक आस-डॉ. अनीता पंडा, डॉ. मंजु रुस्तगी, बेटियां-रेखा वर्मा 23, 24
कहानियां-कर्ज़- डॉ० अमिता दुबे, एक मोड़ ये भी-डॉ० मृणालिका ओझा, एक बीज आशा का-अलका प्रमोद, तलाक-उषा महाजन, बैसाखियां-पवित्रा अग्रवाल 25–45
साहित्य समाचार 06,13
कविताएं-विज्ञापनों में घसीटी जा रही नारी-प्रीति सैनी, रश्मि द्विवेदी जख्म-डॉ. माधुरी त्रिपाठी, पहरा-आकांक्षा भट्ट, विधाता तेरा यह संसार-कमला सिंह, विवाह-सीमा कुमारी चौधरी, बलात्कृत लड़की-नीलिमा शर्मा, बहनें-रश्मि राजगृहार, छात्रा की व्यथा-डॉ० पार्वती यादव, नींद बेचना और खरीदना-रीता दास राम, मेरी ख्वाबों की बगियां में-मंजू शर्मा, रोटी बनाती स्त्रियां-पूनम सिन्हा, ख्वाहिशें-नीतू गुप्ता, सबक-कु० दिव्य सृष्टि 8, 15, 18, 33, 37, 45, 46–50,
लघु कथा-सही सलाह-विनीता चौल 49

मुख्य संरक्षक
श्री बुद्धिसेन शर्मा
संरक्षक सदस्य
श्री डी.पी.उपाध्याय, बलिया, उ.प्र.

प्रबंध सम्पादक
श्रीमती जया
विज्ञापन प्रबंधक
महेन्द्र कुमार अग्रवाल

ब्यूरो
ब्रज बिहारी ब्रजेश, खीरी
निगम प्रकाश कश्यप, मिर्जापुर, उ.प्र.

सम्पादक
गोकुलेश्वर कुमार द्विवेदी

संपादकीय कार्यालयः
एल.आई.जी.–93, नीम सराय कालोनी, मुण्डेरा, इलाहाबाद –211011 का0: 09335155949
ई–मेलःvsnehsamaj@rediffmail.com

सभी पद अवैतनिक हैं
पत्रिका में प्रकाशित रचना का कोई भी पारिश्रमिक देय नहीं है।
प्रिंट लाईन–विश्व स्नेह समाज राष्ट्रीय हिन्दी मासिक पत्रिका, यूपीहिन्दी/2001/8380, सर्वाधिकार सुरक्षित है. स्वामी की लिखित अनुमति के बिना सम्पूर्ण या आंशिक पुर्न प्रकाशन प्रतिबंधित है. स्वतत्वाधिकारी स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक और संपादक गोकुलेश्वर कुमार द्विवेदी के द्वारा भार्गव प्रेस बाई का बाग, इलाहाबाद से प्रकाशित किया.

नोटःपत्रिका में प्रकाशित रचनाओं, समाचारों इत्यादि से संपादक का सहमत होना आवश्यक नहीं हैं. इसके लिए लेखक, रचनाकार, सूचनाकार स्वयं ही उत्तरदायी हैं. जन–जन को सूचना मिलने के उद्देश्य से सभी के विचार, संदेश, आलोचना, शिकायत छापी जाती है. पत्रिका से सम्बन्धित किसी भी प्रकार के वाद–विवाद का निपटारा केवल इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश, की अदालतों में होगा.

प्रेरक प्रसंग

अरी गौरैय्या चूं चू, चूं से क्या कह रही हो? किस सत्य का उदघाटन करना चाहती हो. यहां अपने अपनों में लिप्त है, जन-जन से क्षुब्ध है, निर्बल सबल से त्रस्त है. भ्रमित, चकित, कुंठित, जग में तेरी यह सीख कोई सुने तो कैसे? कोई समझे तो कैसे?

आर्त, भयातुर, विहंग, बटेर! चाहे जितनी दौड़ लगा, चाहे जिस झाड़ी की आड़ में छिप, क्रूर बहेलिया तुझे पकड़ ही लेगा. करल रुपी पंजो की पकड़ भला कहां नहीं है? फिर मृत्यु का क्या भय? रम्य प्रकृति की अद्भुद निर्माण में उन्मुक्त, स्वछन्द होकर विचर. उसका भी अन्त है, अत्याचारी का भी विनाश अवश्यम्भावी है.

बुल बुल तुम सुन्दर हो, तभी तुझसे प्यार है, मानव का. बांध लेता है तुम को प्रेम-डोर से मन को बहलाने को, फिर उदास क्यों? सुन्दरता निर्माण है विधि की और तभी तुम खिलौना हो उस मानव के दुलार की.

भ्रमर! जिसकी याद में तू व्याकुल विक्षिप्त, पागल सा इधर-उधर भटकता फिरता है, क्या तू उसे पा सकेगा? नियति की निष्ठुर विभीषिका को तेरे भटकाव से मोह कहां? ये चांद तारे ये आसमां सबों में तो परिवर्तन है. फिर तू इतना पथ-भ्रान्त क्यों है?

📖 दाउजी

आदाब अर्ज़ है

अपनी बात

महिलायें अपने आप से छलावा क्यों करती है?

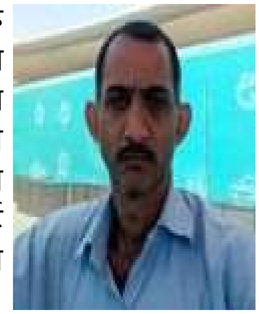

एक तरफ जहां वो कहती है कि पुरुष मुर्ख होते है, वही दूसरी तरफ यह भी कहती है कि हम पुरुषो से कम नही है. अपने आप से छलावा करने का कार्य यही से प्रारम्भ हो जाता है. जो कार्य महिलाओं को अपने मनपसंद के होते है, उसे तो वो कर लेती है, लेकिन जो काम मनपसंद के नहीं होते उसे पुरुषों के माथे मढ़कर अपने आपको निरीह, अबला ना जाने क्या-क्या उपाधियों से स्वविभूषित कर लेती है. दहेज, भ्रूण हत्या इत्यादि की बात आती है तो पति, ससूर, देवर आदि के कारण मजबूर हुई. लेकिन जब अपने लिए साड़ी/गहने/नये स्मार्ट फोन की बात हो तो उसी पति, ससूर, पिता से खरीदवा लेती है. आखिर कैसे? क्योंकि वो उनकी पसंद होती है.

एक मेरी परिचित की सुशिक्षित बहू, ससुराल व मैके के आदर्शवादी, सामाजिक, शिक्षित परिवार से आने वाली कुछ वर्षो पहले कुछ माह की ट्रेनिंग पर गई. ट्रेनिंग से लौटते समय रेलवे स्टेशन पर मय पतिदेव के मेरी अचानक मुलाकात हो गई. मैंने अपने पूर्व अंदाज में पहले पति से अभिवादन किया, फिर जब उस सभ्रांत महिला की ओर मुखातिब हुआ तो देखते ही दंग रह गया. जिस महिला को मैंने अपने २०-२२ वर्ष के परिचय में कभी बिना दुपट्टे के या बिना पल्लू के साड़ी में बाजार तक में नहीं देखा था, उसे पूरी तरह से पाश्चात्य संस्कृति के ड्रेस में ढ़ला हुआ देखकर दंग रह गया. उस पर से मेरे अभिवादन के जवाब में हाथ मिलाने को आगे बढ़ाना. पूछने पर उस महिला ने बताया 'ये ट्रेनिंग में सिखाया गया है.' मेरी ट्रेन को आने में अभी पर्याप्त समय था तो मैंने चाय के लिए कहा. दोनों पति-पत्नि तैयार हो गये. वहां जो वार्ता में उस महिला के बोल निकले वो तो और कान खड़े कर देने वाले थे. उन्होंने बताया कि महिलाएं साड़ी में सेक्सी दिखती है. मेरा तो खून उबल गया मगर चुप रहा. बाद में कुछ मुलाकातों में उनके पति, बहनों एवं परिवार के सदस्यों के द्वारा मालूम हुआ कि दिन भर फेसबुक और व्हाट्सएप पर, फोन पर पुरुषो के साथ लगी रहती हैं. जबकि महिलाओं के ग्रूप में ट्रेनिंग ली थी. उनकी फेसबुक और फोन आईडी में 99प्रतिशत केवल पुरुष वर्ग है. जो महिला अपने परिवार की अनुपस्थिति में किसी रिश्तेदार पुरुष से बात करने में हिचकिचाती थी वह महिला..... एक मुलाकात में मैने पूछ ही लिया तो उन्होंने बताया कि क्या आप लोग चाहते है कि मैं जाहिल बनी रही हूं. 'मैं पढ़ी-लिखी हुं, एडवांस हूं.' ट्रेनिंग से लौटने के बाद तो वे केवल पुरुषों के ड्रेस में ही नज़र आती है. साड़ी तो केवल रिश्तेदारों के वहां की शादियों में. क्या सिर्फ लड़कों के साथ घूमना, पार्टी करना, परिवार व बच्चों पर ध्यान न देना, दो-तीन बजे रात तक मोबाइल पर भीड़े रहना, रेस्तरा/होटलो पर भोजन करना, दो-चार माह के फेसबुकिया दोस्तों के साथ रात्रिकालीन यात्राएं करना एडवांसता का प्रतीक है? और भी बहुत बातें अनसूनी, अनकही दिखी. मेरे परिचित में तमाम आईएएस, आईपीएस, जज महिलाएं है उनको मैंने कभी नहीं देखा ऐसा करते हुए. जबकि उनके साथ विभागीय कर्त्तव्य की मजबूरिया होती है?

बात किसी महिला या पुरुष की नहीं. अगर कोई पुरुष भी ऐसे लक्षण रखता तो उसको भी हम गलत कहते. ऐसी महिलाएं जब कभी घटना-दुर्घटना घटित हो जाती है तो पुरुष ऐसे होते है वैसे होते है का रोना रोती है. जब वेश भूषा की बात आती है तो पुरुष और महिलाओं दोनों के लिए एक निर्धारित मापदण्ड है. अगर कोई पुरुष महिलाओं के ड्रेस पहने तो क्या महिलाएं पसंद करेगी? कदापि नही. अगर कोई पुरुष अंधनंगा सड़क पर चले तो उसे पसंद करेगी कदापि नहीं? अगर पसंद है तो यह बताये कि सभी धर्मो में पूज्य भगवान की फोटो, पत्थर के बने देवी-देवता की मूर्ति को हम हर समय उनके लिंग के अनुसार धोती, साड़ी आदि से क्यों ढ़के रहते है? नवरात्र में मां दुर्गा को चूनरी क्यों चढ़ाते है? जब हम पत्थर के बने देवी-देवताओं, विभिन्न धर्मो के मान्य भगवान की फोटो को एक सर्वमान्य ड्रेस से हर समय सुसज्जित रखते है तो क्या हम एक प्रापर ड्रेस से सुसज्जित नहीं रह सकते. चाहें पुरुष हो या महिला दोनों की खूबसुरती एक निर्धारित वेशभूषा, जिसमें शरीर के अधिकांश भाग ढके हुए हो, में ही सभ्य, एडवांस, शिक्षित प्रतीत होते है. खुले

अंग, बेढंगे ड्रेस, विपरीत लिंगी ड्रेस अपने अंदर की कुंठित, कमजोरी, कमियों को छुपाने के लिए प्रयोग किये जाते है. अगर आपके अंदर काबिलियित है, योग्यता है तो अंग, पाश्चात्य ड्रेस एडवांसता का प्रतीक हैड्रेस ही एडवांसता, पुरुषों से बराबरी, निर्भिकता का प्रतीक है, तो फिर आरक्षण की मांग क्यों करती है? आरक्षण क्यों लेती है? बैंक में, रेलवे स्टेशन पर अलग लाईन में क्यों खड़ी होती है? ट्रेनों में अलग महिला बोगी, बसों में महिला सीट, महिलाओं के लिए अलग टेंम्पों, अलग से महिला बैंक, महिला थाना की जरुरत क्यों?

तमाम विसंगतियों के बावजूद यह कहा जा सकता है कि महिलाएं अब पहले की तुलना में सशक्त हुई है और बहुत ही तेजी से आगे बढ़ रही है. इसमें कोई दो राय नहीं है. एयर जेट उड़ाने से लेकर सीमा सुरक्षा आदि में भी अपनी सशक्त भूमिका अदा कर रही है. साथ ही साथ बेटी पढ़ाओ बेटी बचाओं का नारा भी दे रहे है. फिर भी ना तो भ्रूण हत्याए रुकी ना बलात्कार की घटनाएं. महिला सशक्तिकरण की बात करने वाले नेताओं की नाक के नीचे इस तरह के कुकृत्य हो रहे है. हमारी बहने व्हाटसएप, फेसबुक, मैसेन्जर पर दिन-रात अनावश्यक बहसकर अपने आपको सशक्त होने का दंभ भरती नजर आती है, तो दूसरी तरफ पुरुष समाज को कोसती हुई अपने आपको हीन दर्शाने का काम भी करती है. अगर सोशल मीडिया पर १२-१४ घंटे सक्रिय होकर आप अपने आपको सशक्त साबित करने का प्रयास करती है तो ये आपकी भूल है. बात कड़वी है, लेकिन सच है. अगर आपका काम निर्धारित है, तो पुरुषों का काम भी निर्धारित होता है जिसे वे करते है. आप अपने पति, बच्चों, सास-ससुर को समय से खाना देकर असक्त/नौकर नहीं बन जाती है क्योंकि पुरुष वर्ग भी अपने जीविकोपार्जन के अतिरिक्त कुछ कामों को करता है जो उसके लिए निर्धारित है. आपके पास समय नहीं है, बीमार है तो अलग बात है. आप में से कितनी बहने एक-दो घंटे का समय निकालकर अपने घर-परिवार के बच्चों को संस्कार देने में खर्च करती है.

संपादक

प्रविष्टियां आमंत्रित है

काव्य के क्षेत्र में: कैलाश गौतम सम्मान-(हास्य/व्यंग्य रचना), स्व.किशोरी लाल सम्मान (श्रृंगार रस की एक रचना पर), महादेवी वर्मा सम्मान (छायावादी रचना पर) **गद्य के क्षेत्र में:** डॉ. रामकुमार वर्मा सम्मान (नाटक) उपेन्द्र नाथ अश्क सम्मान (कहॉनी/उपन्यास/लघु कथा) **हिन्दी सेवी सम्मान**-ऐसे व्यक्ति जो किसी भी प्रकार से हिन्दी सेवा कर रहे हों अथवा हिन्दी का प्रचार/प्रसार, हिन्दी के विकास के लिए कार्य कर रहे हों। **समाज सेवा के क्षेत्र में:** समदर्शी पवहारी शरण द्विवेदी स्मृति समाज सेवी सम्मान-ऐसे व्यक्ति जो कम से कम गत ५ वर्षो से समाज सेवा में उल्लेखनीय योगदान दे रहे है. **कलाश्रीः** (कला/संस्कृति/लोकनृत्य/शास्त्रीय संगीत/अभिनय/संगीत/पेंटिग, नृत्य आदि के क्षेत्र में उत्कृष्ठ योगदान के लिए), **राष्ट्रीय प्रतिभा सम्मान/राष्ट्रीय युवा प्रतिभा सम्मान**-(हिन्दी सेवा के साथ-साथ किसी अन्य {ks= esa fo"ks'k ;ksxnku dsfy,] izkf.kd fooj.k½¼qkvksa dh mez35 वर्ष से कम हो) **विशेषः** १. प्रविष्टि के साथ सम्बन्धित विधा की एक रचना, विवरण के सम्बंध में प्रमाणिक विवरण तीन प्रतियों में तथा एक टिकट लगा जवाबी लिफाफा, सचित्र स्वविवरणीका और 100 रुपये मात्र का धनादेश/डाक टिकट आवेदन के साथ संलग्न कर भेजना अनिवार्य होगा. २.रचनाएं व सहयोग राशि लौटाई नहीं जाएँगी. ३. निर्णायंक मण्डल का निर्णय अंतिम व सर्वमान्य होगा. किसी प्रकार के विवाद के सदर्भ में न्यायिक क्षेत्र इलाहाबाद होगा. अन्य जानकारी के लिए सम्पर्क करें:- **अंतिम तिथिः 30 नवम्बर 2018**

अध्यक्ष, **पवहारी शरण द्विवेदी स्मृति सेवा समिति**
65ए/2, लक्सों कंपनी के सामने, रामचन्द्र मिशन रोड,
धूमनगंज, इलाहाबाद-211011, उ.प्र.
मो०: 09335155949, ईमेल-psdiit@rediffmail.com

हे प्रभु! अगले जन्म मुझे बिटिया ना किजो

पता नही मेरा क्या कसूर था कि मुझे आप अपने साथ नही रख सके. मुझे अपनाना नहीं था तो अस्पताल या अनाथालय में छोड़ आते. इस गटर में मैं किसी कुत्ते या चील द्वारा नोंच खाने का इंतजार तो नहीं करती. इस गंदगी में जितने घाव मच्छर, मक्खी और कीड़ों ने मुझे दिये हैं उससे भी ज्यादा तकलीफ मुझे अपने जन्मदाता से मिला है.

–निधि गौतम

शिक्षा–एम0बी0ए0, सम्प्रति–स्वतंत्र लेखन

सम्पर्क–1541, रुक्मिनि सदर, सी एण्ड डी ब्लाक, अनिकेथना रोड, क्वेम्पुनगर, मैसूर–570021, कर्नाटक,

मो0: 7411560007

आज मुझे गटर में फेंके हुए एक पूरा दिन बीत गया जब माँ पापा ने अपने इस अंग को यहाँ फेका था मुझे यहाँ बेहद तकलीफ हो रही है. सूरज की तपती हुई किरणें मेरे मासूम शरीर के साथ मेरी आत्मा को भी जला रही है. पता नही मेरा क्या कसूर था कि मुझे आप अपने साथ नही रख सके. मुझे अपनाना नहीं था तो अस्पताल या अनाथालय में छोड़ आते. इस गटर में मैं किसी कुत्ते या चील द्वारा नोंच खाने का इंतजार कर रही हूँ. इस गंदगी में जितने घाव मच्छर, मक्खी और कीड़ों ने मुझे दिये हैं उससे भी ज्यादा तकलीफ मुझे अपने जन्मदाता से मिला है.

मेरे जाने के बाद माँ, फिर से तुम्हारी गोद हरी हो जायेगी और आशा करती हूँ कि इस बार दादा का वंश चलाने वाला ही आयेगा. तुम्हारा बेटा, जिस पर तुम सब नाज करोगे और जश्न मनाओगे, मिठाईयाँ बाँटोगे. पर कभी सोचा है कि जब तुम अपने बेटे के लिए बहू खोजोगी तो कहाँ से मिलेगी आपको अपनी बहू. आपको, इस समाज को और सभी को तो बेटा चाहिए. बेटी जो इस संसार में नये जीवन का सृजन करती है, आप सब तो उसे बोझ मानते हो. मेरी समझ में ये बात नही आती है कि केवल बेटा ही वंश चलाता है. क्या कभी किसी मर्द ने बच्चे को जन्म दिया? बच्चे में तो केवल आधा गुण ही उसका रहता है बाकि उसका गुण उसे अपनी माँ से मिला है. अगर मैं आपसे आपके वंशावली के बारे मे पूछूँ तो आप अपने तीन पुश्तों के नाम भी ठीक से बता नहीं सकते. जब आपको खुद अपने दादा के दादा का नाम याद नहीं तो यह कैसी परंपरा है वंश चलाने की. पापा आपने मुझे एक मौका तो दिया होता. बेमन से ही सही, पर मुझे ज्ञान दान देकर तो देखा होता. मैं बहुत महान हस्ती होती, इसका मैं वादा तो नहीं करती हूँ पर इतना तो जरूर है कि मैं आपका और माँ की बहुत सेवा करती. आपने सुना होगा की बेटा शादी तक ही अपना होता है और बेटी आजीवन अपनी रहती है. एक बार बहू आई तो बेटा का परिवार अपना होकर भी पराया हो जाता है. एक छत के नीचे दो चूल्हे जलने लगते हैं. आपका प्यार

और सहारा होता तो मैं आज यहाँ कचरे के डब्बे में अपनी अंतिम साँसे नहीं ले रही होती. मैं भी अंतरिक्ष, खेल, राजनीति-जीवन के किसी भी क्षेत्र में आपका नाम रोशन करती अगर आपका साथ होता. जवाहर लाल नेहरू का खानदान उनकी बेटी ने आगे बढ़ाया है. एक बार मुझ पर भरोसा तो करके देखा होता.

दादा और दादी, आप प्लीज मम्मी को बेटी जनने का ताने मत देना. इसमें उनकी कोई गलती नहीं हैं. शायद आप भी समाज के बातों से घबराकर मुझे त्यागने का फैसला किया हो. पर समाज तो हमसे ही बनता है. जब समाज में बेटियों की जान दो कौड़ी की नहीं है तो आपका पोता औरतों की क्या इज्जत करेगा. आप कुमारी कन्याओं को नवरात्र में भोजन कराती हैं. देवी माँ की पूजा करती हैं, पर कोख में आपने मेरी बहनों का खून किया है. अपने खून से सने हाथों से जब आप माँ की पूजा करेगीं तो क्या आपका पोते के लिए प्रार्थना भगवान को स्वीकार होगी? हो सकता है, भगवान ने मुझे आपके पास पोते के रूप में भेज दिया तो आप क्या करेगें? कहते है, इंसान को अपने कर्मो का फल भुगतना ही पड़ता हैं. शायद भगवान मेरी कुंडली ऐसा बनायेगें कि मेरे आज इस एक घाव का और हरेक दर्द का हिसाब आप सब को इसी जन्म में देना हो.

माँ अब शायद मैं ना बचूँ क्योंकि कुत्ते अपनी दाँतों से नोंच-नोंच कर खा रहे हैं. कुछ क्षणों में मेरा प्राण इस कन्या शरीर को छोड़ कर परलोक सिधार जाऐगा. माँ, मैं अपनी इस दर्दनाक मौत के लिए क्षमा करती हूँ. मुझे पता है कि आपको भी जन्म से आज तक अपनी कोई पहचान नहीं रही है. आपमें वो साहस था ही नही कि अपनी बच्ची को समाज की इस घटिया सोच से बचा सको. आज इसी बेटा-बेटी के बीच अंतर करने वाले सोच की वजह से आज तुम्हारी बेटी को मौत मिला हैं. पर जाते-जाते तुमसे एक वादा चाहती हूँ माँ कि अगर तुम्हारी दूसरी संतान (भगवान ना करे) भी बेटी हुई तो उसे मार कर अपने को कलंकित मत करना.

हे प्रभु, इस एक दिन की जिंदगी में आपने मुझे इतने दर्द दिऐ कि मुझसे सहा नही जा रहा हैं. बस अब मैं आपके पास आ रही हूँ. पर अगले जन्म मुझे बिटिया मत कीजो. जानवर के रूप में जन्म मंजूर है क्योंकि वे अपने बच्चे का लिंग देख प्यार नहीं बाँटते और अपने सभी बच्चों को बराबर प्यार करते है.

विज्ञापनों में घसीटी जा रही नारी

-प्रीति सैनी

चुम्बकत्व होता है नारी सौन्दर्य
जो मनुष्य की भावनाओं को
रखता है क्रियाशील
उस सम्वेदना का परिणाम है
जिसने मानव सत्ता को कर्तव्य-बोध कराया
गौरव-गरिमा प्रदान की
इस निगाह से देखें तो सौन्दर्य
उपासना की वस्तु है
अवज्ञा या उपेक्षा की नहीं
जिस नारी को हमारी संस्कृति ने
शक्ति, सरस्वती, माँ, गृहलक्ष्मी
कहकर संबोधित किया
उसे ही चौराहों पर नंगा कर
आज के मनुष्य ने खड़ा किया
इससे लज्जाजनक बात क्या होगी?
सौन्दर्य को ही स्तरहीन आकर्षण का बनाकर
नारी को विज्ञापनों में घसीट लिया
आधुनिकता के नाम पर क्या नारी
और उसका सौन्दर्य
विज्ञापनों की वस्तु रह गया है
धन के लालच में लज्जा को
विज्ञापित किया
बेहतर होता मनुष्य, इस कला से अच्छा
कलाहीन ही रह जाता
आवश्यकता है-आग के बाबुल होने से
पहले ही थाम दिया जाय
अन्यथा इसकी लपट से पूरा संसार
खाक हो जाएगा।

खूबसूरती हमारी शक्ति है

स्त्री का पुरुष से भिन्नता ही उसकी शक्ति है, उसकी खूबसूरती है. इसे उसे अपनी शक्ति के रूप में स्वीकार करना होगा, कमजोरी बना कर नहीं.

-डॉ. कविता विकास
स्वतंत्र लेखिका
संपर्क-डी-15, सेक्टर-9, पोस्ट- कोयलानगर, धनबाद-826005, झारखण्ड
मो०: 09431320288
ईमेल-kavitavikas 28@gmail.com

समाज में लिंग भेद समाप्त करने के लिए अनेक उपाय किये गए हैं. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी ने जेंडर सूचक शब्द जैसे अंग्रेजी के ही और शी को हटा कर एक सामान्य जी शब्द को लाने का प्रस्ताव रखा है. संविधान में अनेक परिवर्तन किए गए और नियम-कानून में भी अनेक बदलाव लाये गए जिनसे स्त्रियाँ पुरुषों के समकक्ष खड़ी हो सकें. शिक्षा और कैरियर में विशेष आरक्षण देने के बाद भी आशानुरूप उनकी स्थिति में बदलाव क्यों नहीं हो पाया है? कारण, इन सभी प्रयासों में स्त्री ने सरकारों और और समाज से अपेक्षा की पर स्वयं को बदलने के लिए कभी प्रयत्न नहीं किया. जिस दिन स्त्रियाँ अपनी लड़ाई स्वयं लड़ेंगी, वे जीत जाएंगी. महिलाओं को अपनी शक्तियों और क्षमताओं का एहसास स्वयं कराना होगा. उन्हें समझना होगा कि शक्ति का स्थान शरीर नहीं हृदय होता है. शक्ति का अनुभव करना एक मानसिक अवस्था है. स्त्री का पुरुष से भिन्नता ही उसकी शक्ति है, उसकी खूबसूरती है. इसे उसे अपनी शक्ति के रूप में स्वीकार करना होगा, कमजोरी बना कर नहीं. कानूनी तौर पर स्त्रियों को नौकरी और पढ़ाई में आरक्षण दिए गए. शिक्षा और करियर में विशेष आरक्षण देने के साथ-साथ कुछ बातें और भी आवश्यक हैं.

सुविधाओं का कोई महत्त्व नहीं, जब तक सुविधा लेने वाला उसे स्वीकार करने के लिए तैयार न हो. प्रथमतः उन्हें यह सोचना होगा कि वे इतनी सक्षम हैं कि किसी भी समस्या को झेल सकें और हल निकाल सकें. अपने जीवन की कुंजी हमारे हाथ में है और इसे अपने तरह से इस्तेमाल करने की आजादी भी. यह आवश्यक है कि हम अपना लक्ष्य पहचानें और इसे पाने का सबसे सुगम रास्ता निकालें. एक औरत अपनी कमजोरी और अपनी शक्ति स्वयं पहचानती है. दूसरों द्वारा बताये गए रास्ते उसको जँच नहीं सकते. एक स्त्री अच्छी तरह जानती है कि वह स्त्रियों की कंपनी में रहना चाहती है या पुरुषों के बीच रह कर अपने काम निष्पादित कर सकती है. वह अपने निर्णय को प्राथमिकता देती है या समूह में लिए निर्णय को?

उम्र की कोई पाबंदी नहीं है. सीखने की प्रक्रिया अनवरत होती है. एक स्त्री को सीखने के सभी दरवाजे खुले रखने होंगे. जिन्दगी कभी भी किसी अवस्था के बाद रूकती नहीं है. अंतिम सांस तक कुछ सीखने की कवायद सलामत रहनी चाहिए. चालीस साल की उम्र के बाद अपने-आप को पुनर्जीवित करने की आवश्यकता है. इस समय तक ज्यादातर जिम्मेदारियां पूरी हो चुकी होती हैं, इसलिए यही वह उपयुक्त समय है जब अपनी छूटी हुई शौक या इच्छा को पूरी की जाए. जिसमे जो हुनर हो वही टास्क ली जाये. मैं ऐसे कई उदाहरण दे सकती हूँ जिन्होंने अपने जीवन के पचासवें पड़ाव के बाद किसी खास काम को करना आरम्भ किया और सफल हुई. एक परिचित कुकिंग में एक्सपर्ट थी. जिम्मेदारियों से मुक्त होने पर उसने कैटरिंग बिजनेस आरम्भ किया और आज वह छोटी- बड़ी पार्टियों में सबसे ज्यादा मांग वाली उद्यमी हैं.

मध्यमवर्गीय परिवार की एक ऐसी ही बहू को मैं जानती हूँ जो ताउम्र घूँघट तान कर रही, घर से बाहर निकलने पर ढ़ेर सारी पाबंदियां. पुरानी पीढ़ी के अंत होते ही और पति की आकस्मिक मृत्यु होने पर उसने कपड़े सिलाई कर जीविका चलानी शुरू की. गराज में शुरू किया हुआ सिलाई का यह धंधा आज के समय में एक सुन्दर बुटीक में तब्दील हो गया है. स्त्री सशक्तिकरण का मतलब केवल बाहरी आक्रमण से स्वयं को बचाना नहीं है, बल्कि आंतरिक

शक्ति से भी लैस होना है जो आत्मविश्वास, आत्मसम्मान और अन्वेषण के माध्यम से प्रकट होता है. छोटे-छोटे कई भागों में बाँट कर काम को करनी चाहिए और अपनी उपलब्धियों पर स्वयं को शाबाशी भी देनी चाहिए. सफलता छोटी या बड़ी नहीं होती है. सफलता मात्र सफलता होती है. सफल होने से अपने अंदर खुशियां आती हैं जो हमारे सौन्दर्य को बढ़ाती है. किसी रचनात्मक कार्य में लगे रहने से अपने ऊपर विश्वास बढ़ता है और यह सकारात्मक ऊर्जा प्रदान करता है. अकेले आना-जाना, ट्रेन-बस में अकेले सफर करना आदि ऐसे आयाम हैं जिनसे स्त्रियां आवश्यक कार्य करना खुद-ब-खुद सीख जाती हैं, मसलन टिकेट कटवाना, नए शहर में अपना बंदोबस्त करना आदि. सफर की मुसीबतों को हल करते हुए आगे बढ़ते रहने की प्रवृति विकसित हो जाती है.

यह मल्टी-टास्किंग का जमाना है. स्त्रियां किसी से कम नहीं, यह बात नहीं भूलनी चाहिए. इन्टरनेट और ऑनलाइन काम करने के स्किल को सीखना चाहिए. बैंक के काम, आनलाइन खरीदारी करना या आनलाइन टिकट -होटल बुकिंग करना समय की बचत के साथ-साथ स्मार्ट भी बनाता है. इन्टरनेट आज के युग की जरुरत बन गया है. इससे एक बड़े दायरे की पहचान होती है. अगर एक तरह की शौक रखने वाले अपना एक ग्रुप बना लेते हैं तो इससे अपने काम से जुड़ी हुई नई चीजों का भी पता चलता है. कहा जाता है कि समान पंख वाले परिंदे एक साथ उड़ते हैं. इसी तरह एक पसंद ग्रुप दूसरों की रचनात्मकता से भी वाकिफ रखने में मदद करता है. इससे अपनी गलतियों को सुधारने का मौका मिलता है. इन्हें बीच-बीच में एक-दूसरे से अवश्य मिलना-जुलना चाहिए. स्त्री-सशक्तिकरण यानि अधिक उत्तारदायित्यों का वहन करना और घर-बाहर दोनों जगहों पर सामंजस्य बनाये रखने में सफल होना सुखद पारिवारिक माहौल और खुशनुमा कार्य -स्थल मानसिक शांति देता है. यह तनाव को हटाने में सहायक होता है. एक सही निर्णय लेकर एक बड़ी संख्या के हित में काम करने का हुनर स्त्रियों के पास नया नहीं है. बरसों से दबी इस हुनर को बस उजागर करने की जरुरत है. स्त्रियों को बौद्धिक स्तर पर सम्मान मिलना चाहिए, केवल स्त्री होने के नाते नहीं. समाज से इतनी अपेक्षा होनी चाहिए कि उनके साथ कोई तुलनात्मक व्यवहार न हो, उन्हें उनके स्वरुप में आत्मसात करे. परिवार और समाज के पूरक के रूप में उन्हें लिया जाना चाहिए, हिस्सा के रूप में नहीं.

शहरी महिलाओं ने अपने अधिकारों का उपयोग करना सीखा है. अभिव्यक्ति के अधिकार को गाँव-देहात तक ले जाना होगा. आतंरिक भूभागों को देश की मुख्य धारा से जोड़ने का काम अभी बाकी है. आलोचक चाहे जो कहें, पर एक ऐसी स्त्री जिसके लिए देह उसकी पूंजी, पहचान और जीने का आधार है, वह पूर्णतः स्वतंत्र है. वह सक्षम है, आत्माभिमानी और किसी प्रकार के अपराध-बोझ से विमुक्त भी.

मूल्य वृद्धि सूचना

मूद्रण और कागजों पर भी जीएसटी दर निर्धारित हो जाने के कारण और अन्य मंहगाई को देखते हुए पत्रिका भार वहन करना संभव नहीं हो पा रहा है। इसलिए विश्व स्नेह समाज मासिक का जनवरी 2018 से शुल्क वृद्धि करने को मजबूर होना पड़ा अब शुल्क निम्नवत होगाः–

एक प्रति	15 / रुपये
वार्षिक	150 / रुपये
पंचवर्षीय	700 / रुपये
आजीवन	2100 / रुपये
सरक्षक सदस्य	11000 / रुपये

संपादक

विश्व स्नेह समाज हिन्दी मासिक

एल.आई.जी–93, नीम सराय कॉलोनी, मुण्डेरा,

इलाहाबाद–211011

9335155949

email:vsnehsamaj@rediffmail.com

संवेदनहीन होता समाज

सुख सुविधाओं और सम्पन्नता की खोज में भावनाऐं जो रिश्तों और समाज की बुनियादी ढाँचा है कहीं खो जैसी गई है, सब कुछ यन्त्रवत हो गया है.

-डा० सुकेशिनी दीक्षित

सम्पर्क-87, सुलभ पुरम कार्गिल पैट्रोल पम्प के पास, सिकन्दरा, बोदला रोड, आगरा, उ०प्र०-282007

ई-मेल-sdixit1169@gmail.com

समाज की संवेदनहीनता उत्तरोत्तर चरम शिखर की ओर अग्रसर है. इस संवेदनहीनता को हम सर्वप्रथम परिवारों में ही देखते हैं. परिवार अब एकल होते जा रहे हैं. सुख सुविधाओं और सम्पन्नता की खोज में भावनाऐं जो रिश्तों और समाज की बुनियादी ढाँचा है कहीं खो जैसी गई है, सब कुछ यन्त्रवत प्रतीत होता है. रिश्तों की मिठास अब नमकीन जैसी हो गयी है. आज स्थिति यह है कि सुख सुविधाओं के अर्जन में या अन्य भौतिक कामनाओं की तृप्ति-पिपासा में मनुष्य-मनुष्य से ही विलग हो रहा है. प्रतिस्पर्धा तो जैसे उनके रक्त की एक-एक बूँद मे जम जैसी गयी है. वह रूकना कहाँ चाहता है? यह प्रतिस्पर्धा की दौड़ इसी मनुष्य को अन्य विकारों की जकड़न में धकेल देती है. रोग, शोक, भय से युक्त एकाकी मुनष्य भ्रमित हुआ सा संवेदनहीन ही होगा, इन अवस्थाओं में वह कुछ खोयेगा भी अवश्य ही. संवेदनहीनता समाज के मानवीय ढांचे को शुष्क ही बनायेगी इससे अधिक समाज से प्राप्त की कोशिश भला कैसे कर सकता हैं?

आज मनुष्य द्वारा मनुष्य के सुख, दुख आपस में बाँटे जाते भी नही हैं, उनकी सहभागिता फेसबुक, वाट्सऐप, टी.वी, मोबाइल, इण्टरनेट में अधिक है कारण कि लोग स्वकेन्द्रित हो गये हैं. पड़ोसी दूसरे पड़ोसी के लिए संवेदना स्वरूप खुशी के दो शब्द-प्रस्फुटन में संकोच करता है, यह आत्मकेन्द्रित होता समाज उन पक्षों की पगडंडी पर से होकर गुजरता है जो गिरते-पड़ते जीवन को व्यतीत तो कर रहे हैं लेकिन स्वंय में झुलस भी रहे हैं प्रेम-भाव रूपी जल की आवश्यकता मानव को होती ही है, उससे वंचित होकर वह झुलसेगा ही, पल्लवित नही होगा.

आज यन्त्रचलित सा समाज मानव की भीड़ से भरपूर है किन्तु एक ऐसी शिक्षा एंव ज्ञान को भी वह विस्मृत कर रहा है जो उसे सही मायने में जीवन को जीवंतता के साथ जीना सिखाती है. युवा वर्ग उच्च शिक्षा को ग्रहण कर मोटी तनख्वाह पाने की ख्वाइश में घर से ही दूर हो गया है.

आज व्यक्ति भीड़ भरे समाज में खड़ा है किन्तु फिर भी अकेला ही महसूस कर रहा है उपार्जन, धर्नाजन सबकुछ एक गति में चालित हैं किन्तु स्वंय ऐस्कलेटर जैसा जीवन जी रहा है-जो बस चलता ही रहता है रूकता नहीं।

संवेदना का सरोकार मानवीय मूल्यों की ओर ही इशारा करता है. मनुष्य इन्हीं से विलगाव की स्थिति में है. मनुष्य यन्त्रवत होकर बखूबी अपनी मंजिल की ओर बढ़ तो सकता है किन्तु यदि सभी के मनोभावों की संवेदनाओं का मशीनीकरण हो जायेगा तो समाज की स्थिति दुखदपूर्ण होती चली जायेगी. हमारा व्यवहार हमें चाबी भरकर आगे बढ़ायेगा और हम चल पड़ेगें, पीछे छोड़ देंगें भाव विहीनता. आज सभी आधुनिक तो हो गये है बड़े-बड़े और मंहगें मोबाइल लेकर घूमते हैं लेकिन समय किसे दे रहे हैं? मोबाइल को स्टेटस सिम्बल का प्रतीक ये भौतिक उपार्जन मुनष्य को मनुष्य से जोड़ नहीं रहा है वरन् ईर्ष्या, द्वेष, प्रतिस्पर्धा का विपरीत प्रभाव छोड़ रहा है।

आरम्भ होने का समीकरण यही कहता है......आप बैलेंस करो स्वंय को-फिर समाज को किसी एक व्यक्ति के निर्माण से समाज स्वस्थ या जागरूक नहीं हो सकता सभी की मनःस्थिति में परिवर्तन होना आवश्यक है.

आज समाज में जो पनप रहा है, और जो उबल रहा है वह भाव-संवेदना को बहुत परे धकेल रहा है. जीवन को सुंदर से सुंदरतम बनाने के लिए भाव-संवेदनाओं की बारीकी को गहराई से समझना आवश्यक है.

तथ्य यह है कि मानव को मानव की पीड़ा के प्रति संवेदनाशील अवश्य होना होगा, उसके सुख-दुख का साथी बनना होगा, पीड़ा दूर होगी प्रेमरूपी जल औषधि से, जिसका सिंचन ही सबको पल्लवित कर पायेगा. उसके बिना मनुष्य अधूरा है. समाज मृतवत एंव जड़वत होकर रह जायेगा..

सांस्कारिक पतन के जिम्मेदार

आज हम बच्चों को गुस्सैल, अखड़ और संवेदना-शून्यमान कर उन्हें ही दोषी नहीं कह सकते क्योंकि ताली कभी एक हाथ से नहीं बजती. गलती कहें या कमी, हमारी यानी बड़ों की भी रही होगी.

-डॉ० पूनम माटिया
माता-स्व. मैना गुप्ता, पतिः श्री नरेश माटिया, सम्प्रतिः स्वतंत्र लेखन, साहित्यिक संपादिका शिक्षाः एम.एस.सी, बी.एड, एम.बी.ए संपर्कः पॉकेट ए, 90बी, दिलशाद गार्डन, दिल्ली-110095, मो०:9312624097 ई-मेलः poonam_matia@gmail.com

बोली यूँ बाप से माँ डाँटो न हद से ज्यादा।
फर्जन्द के जहन से कहीं डर निकल ही जाए।।

मेरे इस शेर में साफ जाहिर हो रहा है कि अब वो समय नहीं रहा जब बच्चों को डांट-डपट के बात मनवाई जा सके. अधिक जबरदस्ती की गयी तो हो सकता है बच्चा हाथ से निकल जाए या फिर आपको ही कुछ बुरा-भला सुनने को मिल जाए.

संस्कार की बात जरा पुरानी-सी लगती है. जब आँख का इशारा ही काफी होता था. बात समझने-समझाने के लिए. जैसे-जैसे संयुक्त परिवार समाप्ति की ओर जा रहे हैं वैसे-वैसे ही बड़ों-छोटों के आपसी प्रेम व्यवहार, साझा करने की आदत और मानद सम्मान की परम्पराएं भी लुप्त होती नजर आ रही हैं.

लिखने-कहने को बहुत कुछ है क्यूंकि किसी बदलाव के वृक्ष की जड़ें कहाँ तक फैलीं हैं वो तो जमीन को कुरेदने के बाद ही जाना जा सकता है परन्तु इस लेख के सीमित परिपेक्ष में मैं कुछ ही बातें उद्धरित करना चाहूंगी.

दरअसल, आज हम बच्चों को गुस्सैल, अखड़ और संवेदना-शून्यमान कर उन्हें ही दोषी नहीं कह सकते क्योंकि ताली कभी एक हाथ से नहीं बजती. गलती कहें या कमी, हमारी यानी बड़ों की भी रही होगी जो आज सांस्कारिक पतन देखने को मिल रहा है. सामाजिक कुरीतियां यथा छेड़-छाड़, बलात्कार, कत्ल और वृद्धाश्रमों की संख्या उत्थान पर हैं और इनके निराकरण के लिए हमे ही आगे आना होगा. बच्चों-बेटों-बेटियों को जरूरी स्कूली-शिक्षा के साथ-साथ घर पर भी नैतिक शिक्षा देना अति आवश्यक है.

न अत्यधिक बंधन और न ही खुली छूट बच्चों के लिए हितकारी है. शुरू के 12—13 वर्ष जीवन का वह काल होता है जब हम बच्चों को प्रभावित कर सकते हैं. उसके बाद उनकी आदतें बदलना आसान नहीं होता, तो यह जरूरी हो जाता है कि सीमित यानी छोटे परिवारों में, जहाँ माता-पिता दोनों ही कामकाजी हैं या काम काजी नहीं भी है पर अत्यधिक व्यस्त हैं, माता-पिता दोनों को अपनी परेशानियों, काम-काज में से समय निकालना होगा. बच्चों के साथ समय बिताने की चेष्टा करनी होगी और अपनी निगरानी में उनमे संस्कार रोपित करने होंगे. सच बोलना, बड़ों का आदर करना, विपरीत सेक्स के प्रति संवेदनशील होना, एक-दूसरे की जरूरतों का खयाल रखना, बाँट कर खाना, इत्यादि नैतिक बातें बच्चों को माँ-बाप ही दे सकते हैं और देनी भी चाहिए ताकि आज के बच्चे भविष्य में बेहतर इंसान और नागरिक बन सके.

आवश्यकता है

1996 से निरन्तर प्रकाशित विश्व स्नेह समाज मासिक को देश के विभिन्न शहरों में

■ संवाददाता ■ ब्यूरो प्रमुख,
■ विज्ञापन प्रतिनिधियों

की जवाबी लिफाफे के साथ लिखेंः

प्रबंध संपादक-विश्व स्नेह समाज मासिक

महिलाओं का सामाजिक उत्थान व पतन

हमारे समाज के कुछ पढ़े लिखे पुरुष वर्ग जिनकी सोच थोड़ा बदली है वो महिलाओं का यथोचित सम्मान करते है और उनको बढ़ावा भी देते है. पर कुछ कुंठित विचारधारा के लोगों के लिए महिलाये केवल और केवल वस्तु है.

-अमिता सिंह
नयापुरा, 96/सी, करैली, इलाहाबाद, उ०प्र०
मो०:9451322475

हमारे समाज में महिलाओं के लिए बड़े-बड़े मुददे बनते रहते है और बदले रहते हैं. लेकिन अगर कानून या मुददों का पालन होता तो सचमुच में महिलाओं की ऐसी दशा न होती और भेदभाव व अत्याचार कब का खत्म हो गया होता. स्त्रियां हमारी धुरी है. उनके बिना संसार का या घर की कल्पना भी नहीं की जा सकती. भारतीय संविधान के कई प्राविध ाान विशेषकर महिलाओं के लिए बनाये जरुर गये है, परन्तु इस बात की जानकारी क्या सभी महिलाओं को होती होगी या कुछ को ही हो पाती है. कुछ ऐसा प्राविधान हो या नियम हो कि समाज की हर एक महिला तक उस मुददे की आवाज पहुंचे या जानकारी हो. हमारे समाज की तीन चौथाई जिम्मेदारी ही सम्भाल रही है. फिर उनके साथ ऐसी मानसिकता क्यों? हमारी बहनें एक साथ न जाने कितने पद सम्भालते हुए मां, बहन, पत्नी, बहु, बेटी सबका निर्वहन बड़ी ही सुझ-बुझ और समझदारी से करती. अपने आफिस या विभाग में पुरुषों से अच्छा प्रदर्शन करती है. फिर भी उनके साथ भेद-भाव करते समय सहानुभूति नहीं दिखाई पड़ती. समाचार पत्रों, टी.वी. समाचारों में उनके लिये बड़े-बड़े मुददे आते रहते हैं लेकिन क्या वाकई उन तक पहुंचते है. यह एक ज्वलंत और विकट मुददा है. हमारे समाज के कुछ पढ़े लिखे पुरुष वर्ग जिनकी सोच थोड़ा बदली है वो महिलाओं का यथोचित सम्मान करते है और उनको बढ़ावा भी देते है. पर कुछ कुंठित विचारधारा के लोगों के लिए महिलाये केवल और केवल वस्तु है. ऐसे लोगों के लिए कौन सा कानून बने या बनाया जाए जो महिलाओं को उनका हक और सम्मान दिला सके. हमारी स्त्रियां निःस्वार्थी है. वे अपने परिवार की निःस्वार्थ सेवा करती है या यो कहियें अपनी परवाह किये बिना करती है. दिन-प्रतिदिन जो उनसे बनता है करती रहती है. मंदिर में खड़ी होती है तो अपने परिवार और बच्चों के लिए प्रार्थना करती है या दुआ मांगती है. वहॉ भी अपने लिये कुछ नहीं मांगती. कुछ उच्चवर्ग की महिलाओं का सम्मान तो दिखता है और उनका सामाजिक स्थान भी दिखाई पड़ता है, अपितु क्या निम्नवर्ग की महिलाओं का सम्मान या अधिकार दिखाई पड़ता है. ऐसी महिलाओं को देखकर खुद भी महिला होने का अफसोस होता है. लेकिन हम उनकी स्थिति सुधारने का संकल्प अकेले नहीं ले सकते.

आजकल महिलाओं के साथ जो भी घटनायें घट रही है. क्या वो इसकी जिम्मेदार खुद है. हां कुछ हद तक है। लेकिन बहुत बड़ा सहयोग हमारे समाज का भी है. क्या ऐसे में उनके उत्थान की कल्पना की जा सकती है. शायद नहीं जब तक पुरुष वर्ग महिलाओं का उपयोग अपनी जरुरत के लिये करते रहेंगे तब तक तो बिल्कुल नहीं. महिलाये कितना भी बड़ा काम कर ले उन्हें पुरुषों से कम से कम आका जाता है. ऐसा क्यों, क्योंकि भारत पुरुष प्रधान देश है. वो अपने आगे स्त्रियों को बर्दास्त ही नहीं कर पाते. अपनी मानसिकता की वजह से. वो ये भी भूल जाते हे कि ये महिलायें ही है, जो रसोई का बड़ा भाग पुरुष वर्ग को ही समर्पित करती है. अपने लिये समझौता. लेकिन जब यही उन्हें अपमानित या हेय दृष्टि से देखता है तब अफसोस हो जाता है मैंने सॉप की परवरिश की है.

हमारे समाज के सारे बन्धन या सीमायें महिलाओं के हिस्से में है. संस्कार शिष्टाचार समाजिकता, व्यावहारिकता से बधे रहना उनकी नियति है। ऐसी दशा में उनके उत्थान की बड़ी-बड़ी बातें हम कैसे कर सकते है. हमारा इतिहास पुरुष वर्ग से ही है नहीं जाना जाता. महिलाएं भी बराबर की भागीदार है. फिर ऐसी मानसिकता क्यों? हमारी सरकारे प्रयासरत है हमें उनका सहयोग करना चाहिये. तभी हमारे देश की महिलाओं का विकास सम्भव हो पायेगा और तभी हम इस व्यभिचारिकता से मुक्ति पा सकेंगे. फिर स्त्रियों का दुर्गा, काली, लक्ष्मी कहना चरितार्थ हो सकेगा. हमारा इतिहास हमें ये बताता है कि प्राचीन महिलायें भी अबला नहीं थी. समय आने पर पुरुषों के बराबर खड़ी

होकर युद्ध करती थी और विजयी होती थी. फिर आज की महिलायें इतनी कुंठित और अबला क्यों? कहीं न कही अपने पतन की जिम्मेदार वे स्वयं है.

उठो जागो और अपने सम्मान और अधिकार का बीड़ा स्वयं उठाओ. तभी हम इस भ्रष्ट समाज का मुकाबला कर सकेंगे। वरना समाचार पत्रों में ही सिमट कर रह जायेंगे, दोषारोपण करते हुए सोच बदलेगा हम बदलेंगे, हम बदलेंगे समाज बदलेगा। आज की स्त्रियों को इतिहास की स्त्रियों से तुलनात्मक कुछ सीखना चाहिए.

सम्मानार्थ प्रस्ताव आमंत्रित हैं

साहित्य जगत् में लोकप्रिय, विश्वसनीय एवं राष्ट्रीय स्तर पर चर्चित **विश्व हिंदी साहित्य सेवा संस्थान** द्वारा 2003 से लगातार साहित्यिकारों/पत्रकारों/समाजसेवियों/कलाकारों को सम्मानित करता आ रहा है. इस वर्ष निम्नांकित सम्मान प्रस्तावित है- **40 वर्ष से ऊपर के लिएः** डॉ. कलाम सम्मान, डॉ. होमी जहांगीर भाभा सम्मान (विज्ञान के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान के लिए) **20 से 40 वर्ष के लिएः** काका कलाम सम्मान, कल्पना चावला सम्मान (विज्ञान के क्षेत्र में उल्लेखीय योगदान के लिए), स्वामी विवेकानन्द सम्मान, पवहारी शरण द्विवेदी सम्मान (समाज सेवा के क्षेत्र में उल्लेखीय योगदान के लिए) निर्भया सम्मान-(महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने के लिए किए गये कार्य के लिए) कहानीकार /व्यंग्यकार/कवि/ग़ज़लकार/उपन्यासकार सम्मान(हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में कार्य के लिए कम से कम 64 पृष्ठीय पाण्डुलिपि या कृति), पत्रकार रत्न, पत्रकारश्री, कलाश्री(पत्रकारिता, संगीत, नाटक, पेंटिग, नृत्य आदि के क्षेत्र में उत्कृष्ठ योगदान के लिए), समाज शिरोमणि, समाज रत्न, समाजश्री (समाज सेवा के क्षेत्र में कार्य के लिए) **20 वर्ष से कम उम्र वालों के लिएः** पं. नेहरु सम्मान(देश हित व समाज सेवा), चन्द्रावती देवी सम्मान(हिन्दी व साहित्य सेवा), गोरखनाथ दुबे स्मृति सम्मान(समाज सेवा), बचपना सम्मान (किसी भी क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान के लिए) **सभी आयु वर्ग के लिएः हिन्दी सेवियों के लिए** : विशिष्ट हिन्दी सेवी/हिंदी सेवी सम्मान (विदेशी/हिन्दीतर भाषी नागरिक-किसी भी विधा की रचना), **राष्ट्रभाषा सम्मान** (हिन्दीत्तर भाषी राज्यों के हिन्दी प्रेमियों के लिए जो हिन्दी का व्यापक प्रचार-प्रसार व लेखन कार्य कर रहे है), **राजभाषा सम्मान**-(सरकारी/अर्द्धसरकारी विभागों/उपक्रमों में कार्यरत राजभाषा अधिकारियों द्वारा हिन्दी के विकास के लिए). **शिक्षकश्रीः** (शिक्षा के क्षेत्र में योगदान के लिए), **विधिश्री**-(विधि के क्षेत्र में रहते हुए हिन्दी सेवा के लिए) **हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में-उपाधियांः** कहानी रत्न, काव्य रत्न, काव्य श्री, काव्य शिरोमणि, दोहा श्री, ग़ज़ल श्री (उपाधियां प्रकाशित/अप्रकाशित कम से कम 100 पृष्ठीय कृति पर ही प्रदान की जायेगी जो वर्ष 2011 के बाद प्रकाशित हो या लिखी गई हो.) समग्र साहित्य के लिए संस्थान की सबसे बड़ी उपाधियां क्रमशः साहित्य रत्न(डी.लिट), साहित्य गौरव(डाक्टरेट/पीएचडी), साहित्यश्री हैं. इनके लिए कम से कम 100 पृष्ठों की किसी एक विषय पर लिखि पाण्डुलिपि जो 2014 के बाद लिखी गई हो, प्रकाशित/अप्रकाशित हो, पर दिया जाएगा. प्रत्येक के लिए दो हिन्दी साहित्य सेवी प्रस्तावक का होना आवश्यक है.

विशेषः 1. उपाधियों के लिए चयन त्रिस्तरीय निर्णांयक मंडल द्वारा किया जाएगा. प्रत्येक प्रविष्टि के साथ सम्पूर्ण प्रमाणिक विवरण तीन प्रतियों में तथा साथ में एक टिकट लगा जवाबी लिफाफा, सचित्र स्वविवरणीका और 200/ रुपये मात्र का ध नादेश/ बैंक ड्राफ्ट/मल्टी सिटी चेक अथवा **युनियन बैंक ऑफ इंडिया** की किसी भी शाखा से **'सचिव विश्व हिन्दी साहित्य सेवा संस्थान, इलाहाबाद'** के नाम से **खाता संख्याः 538702010009259** में जमा कर, जमा पर्ची की छाया प्रति आवेदन के साथ संलग्न कर भेजना अनिवार्य होगा. 2. किसी भी दशा में रचनाएं व सहयोग राशि लौटाई नहीं जाएँगी. 3.रचनाओं के साथ मौलिकता को दर्शाना अनिवार्य होगा. सम्मान डाक से प्रेषित नहीं किया जाएगा. किसी प्रकार के विवाद के संबंध में न्यायिक क्षेत्र इलाहाबाद होगा. अन्य किसी भी प्रकार की जानकारी के लिए सम्पर्क करें या देखेंः

अंतिम तिथिः 30 अक्टूबर 2018

सचिव, विश्व हिन्दी साहित्य सेवा संस्थान, एल.आई.जी-६३, नीम सराय कॉलोनी, मुण्डेरा, इलाहाबाद-२११०११, ईमेलः sahityaseva@rediffmail.com

मराठी और हिंदी दलित आत्मकथाओं में स्त्री चिंतन

दलित आत्मकथाएं निरंतर आ रही हैं. इन आत्मकथाओं के माध्यम से दलित आत्मकथा लेखक अपने समाज की जो नई पीढ़ी है उसे अपने समाज की पुरानी स्थितियों को दिखलाने का प्रयास कर रही है.

-डी. अरुणा (पी.एच-डी. शोधार्थी)
जामिया मिल्लिया इस्लामिया यूनिवर्सिटी, नई दिल्ली, मो०: ७३८२४५२६४४
ई-मेल-arunapraja@gmail-com

आत्मकथा में आत्म का सम्बन्ध लिखने वाले से है और कथा का सम्बन्ध उसके समय और परिवेश से है. कोई लेखक जब अपने विगत जीवन को समूचे परिवेश के साथ शब्दों में बाँधता है तो उसे हम आत्मकथा कहते है. हिन्दी में अन्य विधाओं की तुलना में आत्मकथा कम ही लिखी गई है परन्तु पिछले तीन दशकों से इस कमी को पूरा करने का प्रयास सदियों से पुरुषवादी मानसिकता की पीड़ा सहने वाली कुछ स्त्री-लेखिकाओं एवं सवर्ण-वर्चस्ववाद की यातना झेलने वाले कुछ दलित-लेखकों द्वारा हुआ है. इसका कारण स्पष्ट है कि आत्मकथा अधिकतर शोषण की पीड़ा से उपजी है. इस दौर में विविध लेखकों द्वारा लिखी गई आत्मकथाएँ उनके दर्द या जीवन-संघर्ष के दस्तावेज समान है.

भारतीय साहित्य में दलित साहित्य का एक लंबा इतिहास रहा है. इस इतिहास के साथ ही दलित आत्मकथाओं का लेखन स्वरूप भी काफी समय से दलित साहित्य में देखने को मिलता है. जिसमें सबसे पहले मराठी दलित समाज के लोगों ने आत्मकथाएं लिखना शुरू किया है. इन आत्मकथाओं में लेखकों ने अपने जीवन की यातनाओं दुख-दर्द, पीड़ा, भूख-प्यास घटनाओं का वर्णन आदि को उजागर किया है साथ ही अपने समाज में रहने वाले उन लोगों के दुख-दर्द, पीड़ा, गरीबी आदि को भी प्रस्तुत किया है. अतः दलित आत्मकथाएं निरंतर आ रही हैं. इन आत्मकथाओं के माध्यम से दलित आत्मकथा लेखक अपने समाज की जो नई पीढ़ी है उसे अपने समाज की पुरानी स्थितियों को दिखलाने का प्रयास कर रही है.

मराठी दलित आत्मकथा लेखन केवल दलितों का बोध कराने वाली दलित पीड़ा को, दलित भाव-भावनाओं को, दलितों पर होने वाले जुल्म, अन्याय, शोषण, अत्याचार के प्रति घृणा, नफरत, विद्रोह, नकार की भावना जागृत करने वाला एक शास्त्र है. हिंदी की दलित आत्मकथाओं में दलित समाज की सांस्कृतिक और सामाजिक इतिहास चित्रित है. इनका लेखन इतिहास लेखन ही कहा जाएगा. उत्तर भारत में सामाजिक सुधार आंदोलनों की परंपरा उतनी सशक्त नहीं है, जितनी महाराष्ट्र की.

जिण आमुचं (जीवन हमारा) को मराठी स्त्री आत्मकथा लेखन परंपरा में एक महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है. अब तक कई आत्मकथाएँ लिखी जा चुकी है. 'हमारा जीवन' इस अर्थ में महत्त्वपूर्ण आत्मकथा है कि यह केवल बेबी कांबले के निजी सुख.दुख उतार-चढ़ाव का चित्र मात्र नहीं है बल्कि यह एक दलित स्त्री की दृष्टि और उन्होंने भोगे हुए यथार्थ के माध्यम से मरे हुए ढोर-डंगरों के जीवन के साथ-साथ पशु से भी बदतर जीवन जीने के लिए विवश दलित समुदाय के जीवन का प्रामाणिक साक्ष्य है. इसे हम दलित स्त्री की टेस्टीमोनी की संज्ञा दे सकते हैं. 'जीवन हमारा' में स्त्रियाँ विशेषता दलित स्त्री जीवन के विविध प्रसंगों जीवन स्थितियों के साक्ष्य बिखरे हुए हैं जो एक ढंग से पाठक के समक्ष दलित समुदाय के जीवन स्थितियों के आँकड़े उपस्थित करते हैं. स्त्रियों की आर्थिक स्थिति कई प्रकार की रही हैं. स्त्रियों की आर्थिक परिस्थिति प्राचीन काल से लेकर आज तक समाधान कारक नहीं है. समाज में सर्वाधिक आर्थिक शोषण दलित स्त्रियों का ही होता हैं.

'माझ्या जल्माची चित्तर कथा' में शांताबाई काम्बले अनेक समस्याओं का चित्रण किया. जैसे- सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक और राजनैतिक आदि समस्याएँ हमें दिखाई देती है. इस स्थिति को सुधारने के लिए महात्मा ज्योतिबा फुले और डा. बाबासाहेब ने कार्य किया है. दलितों की सामाजिक समस्या मुख्य थी. जहाँ इन्हें गाव से दूर रखा गया था वहां इनकी परछाइयों से भी नफरत करते थे ऊँची जाति के लोग. दलितों को मंदिर में जाने से मना किया गया था. इसका चित्रण हमें 'माझ्या जन्माची चित्तर कथा' में दिखाई देती है. शांताबाई एक बार अपने माँ के साथ पंढरपुर जाती है, मगर बिना विठ्ठल के दर्शन लेते हुए वापस आ जाती है. उन्हें मंदिर नहीं जाने दिया जाता था. डा. बाबासाहेब कहते है-'अस्पृश्यता का होना किसी भी समाज के लिए सबसे भयंकर रोग है.'

'दोहरा अभिशाप' आत्मकथा कौसल्या बैसंत्री के विगत जीवन की

अभिव्यंजना है. उनमें इस आत्माभिव्यक्ति की आकांक्षा जीवन में सार्थकता के बोध से जन्मी है. एक सामान्य दलित कन्या के रूप में जन्म लेने वाली लेखिका अपनी शिक्षा और संघर्ष के चलते समग्र दलित जाति के लिए प्रेरणा का स्रोत बनकर उभरी हैं. आत्म-सन्मान से लबालब लेखिका अपने ही व्यक्तित्व का पुनरावलोकन करती हैं. ऐसे में कहीं पर वह तीव्र भावाभिव्यक्ति से पाठक को आकृष्ट करती हैं तो कहीं विविध शिल्पगत उपकरणों का उपयोग करके पाठक को लुभाती हैं. आत्मकथा का आरंभ तो लेखिका की दस-बारह वर्ष की आयु से होता है परन्तु विशिष्ट कथा-प्रविधि अपनाते हुए उन्होंने अपनी नानी (आजी) के जीवन की घटनाओं को भी विस्तृत रुप से गूँथ लिया है- 'आजी का रंग एकदम गोरा था और नैन-नक्श तीखे थे. आँखे भूरी थीं और काले घने बाल. आजी छह भाइयों की इकलौती बहन थीं और सबसे छोटी.' लेखिका ने आजी के बाह्य व्यक्तित्व को वे इस तरह उभारती हैं मानो यह उनकी अनुभूति का अभिन्न हिस्सा हो. लेखिका ने अभिव्यक्ति की इस नूतन पद्धति को अपनाकर पाठक को यह बोध कराया है कि उनके जीवन की प्रेरणा स्रोत आजी और माँ थी. उस आजी के स्वाभिमानी व्यक्तित्व का यह चित्र देखिए विधि इस लिए भी विशिष्ट है कि लेखिका ने अतीत के भी अतीत को माँ की -'आजी हरदम कहा करती थी कि वह अपनी लड़ाई खुद लड़ेंगी, किसी पर बोझ नहीं बनेंगी. अपने कफन का सामान भी वह स्वयं जुटाएँगी और उन्होंने अपनी बात पूरी करके दिखाई. कफन का सारा सामान उनकी गठरी में मौजूद था. वह मानिनी स्वाभिमान से रहीं, किसी के आगे नहीं झुकीं.' यह कथा-प्रस्मृति माध्यम से जीवंत किया है.

'शिकंजे का दर्द' दलित नारी के शोषण के विरुद्ध के संघर्ष की गाथा हैं. जंगल में शिकारी द्वारा कसे गए शिकंजे में, जब कोई जानवर फंस जाता है. मुक्ति के लिए उसके भीतर से दर्दनाक चीख बहार निकलती है. वह जितना अपने आपको मुक्त करने के लिए छटपटाता है, दर्द उतना ही बढ़ते जाता है. दर्दनाक चीख, सिसकियाँ और कराह में ठाठ सिसकियाँ एवं कराह मूक वेदना में कब परिवर्तीत होती है पता ही नहीं चलता. वह मजबूर, लाचार, विवश होकर दर्द, पीड़ा, दुःख, को लगातार सहता पड़ा रहता है, जंगल के किसी एक कोने में तड़फ-तड़फकर मरने के लिए. दलितों में भी दलित समझे जानेवाली नारी मनुवादी समाज, दलित समाज, मनुवादी मनोवृत्तिवाले पुरुषीय समाज के शिकंजे में वह कई वर्षों से फंसी भीतर से मुक्ति के लिए छटपटाती अपने नारी जीवन को कोसने के लिए विवश दिखायी देती है. जन्म से लेकर मृत्यु तक आत्मापीडन, संत्रास, घुटन, अन्याय, अत्याचार, दुःख, दर्द, उपेक्षा को सहते-सहते मनुवादी समाज और मनुवृत्तिवाले पुरुषों के विरुद्ध आज की दलित नारी में आक्रोश और विद्रोह प्रकट हो रहा है. वह समझ चुकी है कि यदि इस शिकंजे से मुक्ति पाना हो तो शिक्षा ग्रहण करनी होगी.

दलित स्त्री आत्मकथाओं में अभिव्यक्ति संदर्भ, परिवेश, समस्या और संघर्ष का स्वरूप मुख्य रूप से उजागर हुआ है। दलित स्त्री का जीवन में शिक्षित होने के लिए संघर्ष, जातिगत पहचान की वजह से प्रगति के हर कदम पर आनेवाली कठिनाईयों से जूझना, आर्थिक सबलता के लिए कठिन प्रयास, भूख से लड़ाई, स्त्री होने के कारण घर और बाहर होने वाली अवहेलना, अपमान और शोषण की तिहरी मार को झेलना पड़ता है, लेखिकाओं ने अपनी आत्मकथा में इन प्रसंगों, घटनाओं, संघर्षों का चित्रण प्रमुख्ता से किया है. लेखिकाओं ने स्वयं अपने जीवन में भी एक स्त्री होने के कारण सारी पीड़ा को सहा है जो एक स्त्री सदियों से सहती आ रही है.

भारतीय समाज में सबसे निचली सीढ़ी पर खड़ी दलित स्त्री ने सामाजिक निषेधार्थ को लाँघते हुए ब्राह्मणवादी व्यवस्था के आधार खड़े स्तंभ पितृ-सत्ता, धर्म और जाति को हमेशा टक्कर दी है. देश में दलित स्त्रियों की स्थिति बहुत दयनीय रही है. दलित स्त्री की समस्या और स्वाभिमान जब एक दलित महिला व्यक्त करती हैं तो वहां महिला भी उस समस्या को अनुभव करती हैं. अनेक दलित लेखिकाओं ने अपने-अपने ढंग से आत्मकथाओं के माध्यम से इनके दर्द को उठाने की कोशिश की है.

दिल को तुम्हारी याद सताए तो क्या करूं।
तुम बिन कही करार न आये तो क्या करूं।।
हंस खेल के गुजारना चाहते है जिन्दगी।
लेकिन नशीब हमको रुलाये तो क्या करु।।
आते है हम तो पेश सभी से वफा के साथ।
हर कोई फिर भी दिल को दुखाए तो क्या करूं।।
शीशे सा मेरा दिल है मगर उसपे ये जमाना।
पत्थर समझ के चोट लगाये तो क्या करूं।।

रश्मि द्विवेदी
पत्नी श्री संजय द्विवेदी
७६३, राजरुपपुर, इलाहाबाद

मन क्या है?

यदि मन को संयमित किया जाए तो हमें शांति ढूँढ़ने की जरूरत नहीं पड़ेगी क्योंकि तब चित्त तालाब के पानी की तरह ठहर जाएगा.

-आशा रौतेला मेहरा
पति-श्री जगत सिंह मेहरा, संप्रतिः सोम सुधा प्रकाशन में संपादक और लेखिका के पद पर कार्यरत
संपर्कः मकान नं-4 कविता कॉलोनी, नाँगलोई, दिल्ली-110041, मो०:9716164982
ई-मेल:asha-rautela010@gmail-com

मन क्या है? इस विषय में हम इतना ही समझ पाते है कि यह केवल दुख, दर्द, संताप के सिवा कुछ नहीं. इसका प्रमुख कारण है-इसकी चंचल वृत्ति इसी कारण चित्त अस्थिर होता है और प्रमाद बढ़ता है, इन्हीं कारणों से मनुष्य इतना व्यथित होता है कि वह बुरे कार्यों की ओर अग्रसर हो जाता है परन्तु वास्तव में वह विनास के गर्त में चला जाता है. हमारे शास्त्रों में मन को वायु से भी अधिक गतिशील बताया गया है. कभी-कभी मन की चंचल वृत्ति के दुष्परिणाम भी होते है. इसका कारण है विवेक द्वारा इसे संयमित न किया जाना. यदि मन को संयमित किया जाए तो हमें शांति ढूँढ़ने की जरूरत नहीं पड़ेगी क्योंकि तब चित्त तालाब के पानी की तरह ठहर जाएगा.

जीवन में ज्ञान की प्राप्ति के लिए स्थिरता (ठहराव) का होना परम आवश्यक है. इच्छा, मांग, चाह हमें सांसारिक सुविधाए तो दे सकती है, कींचित ये अधिक ही होंगी फिर हमारी इच्छाएं बढ़ती ही जाएगी, इन्हें नियंत्रित करने के लिए इंद्रिय-निग्रह आवश्यक है. ज्ञान प्राप्ति में यह किस प्रकार सहायक हो सकती है इस विषय में भगवान श्री कृष्ण ने कहा है कि-

यदा संहरतेचाडयं कूर्मोअंगनीव सर्वशः।
इन्द्रियाणीइन्द्रियर्थेतस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठतः।

अर्थात इंद्रियों की गति कछुए की गति के समान है, जिस प्रकार अपने पैरो को अंदर कर लेने से कछुआ अपने आप में पूर्ण हो जाता है. भौतिक जगत में उसकी गति समाप्त हो जाती है. उसी प्रकार इंद्रियों को भौतिक विषयो से अलग करने पर व्यक्ति ज्ञान में स्थिर हो जाता है. वह आत्मकाम हो जाता है उसकी भौतिक इच्छाएँ समाप्त हो जाती है.

चंचलता स्थिरता में बाधक है. यही कारण है कि हम मृत्युलोकी हमेशा किसी न किसी के पीछे भागते रहते है, यह भागना ही तो दुख को जनम दे रहा है. अरे! हम क्यों भाग रहे है? किसके पीछे भाग रहे है, क्या उसके पीछे भागना उचित है? जिस दिन हम इस प्रश्न का उत्तर ढूँढ लेंगे उस दिन हम सभी प्रकार के विकारों से मुक्ति पा लेंगे और इसका एक उपाय है- इंद्रिय निग्रह. जब तक हम सांसारिक विषयों में फँसे रहते है तब तक आवेशित होते रहते है. इसी से सम्मोह पैदा होता है. यही सम्मोह स्मृति भ्रम का कारण होता है, जो बुद्धि नाश का हेतु बनता है और विवेक को नष्ट करता है. अतः सर्वप्रथम हमें अपने भीतर से इस विकार को दूर करना है. क्या हम ऐसा कर पाते है? नहीं क्योंकि हमारी इच्छाँ,, तृष्णा हमें ऐसा करने नहीं देती. हमारी समस्या का समाधन हमारे हाथ में है फिर भी हम भटक रहे है, हमें यह भी चाहिए, हमें वह भी चाहिए. बस यही है हमारे जीवन लक्ष्य मन एकाग्र नहीं है, तभी तो भटकाव है इतना संताप है. जब तक मोह-माया है तब तक हमारा मन स्थिर नहीं रह सकता और जिसने इस मन पर विजय प्राप्त कर ली समझ लो एक तरह से उसने मोक्ष के द्वार पर दस्तक दे दी.

इस चराचर में इंसान भगवान की अनुपम कृति है. परंतु दुर्भाग्य की बात है कि आज हम स्वयं को निराश महसूस कर रहे है क्योंकि मानव बनने के लिए धर्मिक होना जरूरी है, परंतु यह धर्म शाश्वत चिरतन एवं उध्वरेता होना चाहिए. अमरता एवं मानवता के संबंध में सुमित्रानंदन पंत ने लिखा-

मानव दिव्य स्पफुलिंग चिरतन
वह न देह का नश्वर रज कण
देश-काल का उसे न बंधन
मानव का परिचय मानव पन

आधी आबादी और जी.एस.टी.

शक्तिस्वरूपा महिलाएं किस तरह अपने घर परिवार और कार्य क्षेत्र को संभालती हैं. उसी की सेहत के प्रति हम लापरवाह हो सकते हैं, यह बहुत अन्याय पूर्ण और अनुचित है. जिसके स्वास्थ्य की देखभाल की जिम्मेदारी सदस्यों के साथ, समाज और सरकार की भी है.

-अनुपमा श्रीवास्तव 'अनुश्री'
साहित्यकार, कवयित्री, एंकर
संपर्कः ई-2/302, फारचून डिवाईन सीटी, मिसरोड–462047, भोपाल, म.प्र.
मो०: 8879750292,
ई-मेलः ashri0910@gmail.com

हम शक्ति पर्व मनाते आए हैं. शक्ति के आवाहन, पूजन, अर्चन से शक्ति की मन्नतें, सुख समृद्धि, ऐश्वर्य, धन वैभव का वरदान मांगते रहे हैं. हमारे घर में ही शोभनीय है शक्ति स्वरूपा नारी मां, बेटी, पत्नी, दादी, नानी, सहकर्मी के रुप में अनगिनत भूमिकाएं निभाती है. जो जमी है पुरुष की उड़ान के आकाश की. रीढ़ है परिवार की. आज तो तकनीक के साथ कदम से कदम मिलाकर चल रही है. ऊंचे ऊंचे पदों पर कार्य कर रही है. आज वह गूगल माम बन गई है. घर परिवार की कार्यक्षेत्र की दोहरी जिम्मेदारियां निभाते हुए, उन्हें कुशलता से अंजाम देते हुए. शहर की स्मार्ट नारियों की बात करें या गांव की मेहनतकश महिलाओं की बात! बात वही है, एक मत से सही है और सभी के लिए है. यह शक्तिस्वरूपा महिलाएं किस तरह अपने घर परिवार और कार्य क्षेत्र को संभालती हैं, अपनी ऊर्जा, शक्ति से घर और बाहर की बहुत सारी प्रतिकूल परिस्थितियों को सहन करते हुए. उसी की सेहत, स्वास्थ्य सुरक्षा के प्रति हम लापरवाह हो सकते हैं, यह बहुत अन्याय पूर्ण और अनुचित है. जिसके स्वास्थ्य की देखभाल की जिम्मेदारी सदस्यों के साथ, समाज और सरकार की भी है.

आधी आबादी नारी, सृजन कर्ता है उसी के स्वास्थ्य सुरक्षा को लेकर हम इतने निश्चिंत हो जाते हैं कि उसी के हित में बनाए गए नियमों और उठाए गए कदमों को उस तक पहुंचने नहीं देते! बड़ा ज्वलंत सवाल है कि क्यों महिलाओं को ही पीछे रखा जाता है हितग्राही होने से! क्या अपनी स्वास्थ्य सुरक्षा का अधिकार नहीं है उन्हें! क्या उन्हें आपकी ही तरह, अपनी जिंदगी से प्यार नहीं है! किस तरह उनके लिए सबसे ज्यादा जरूरी, उन पांच दिनों की स्वास्थ्य सुरक्षा और हाइजिन को नजरअंदाज करते हुए 'सैनिटरी नैपकिन' पर, बारह प्रतिशत जीएसटी लगाकर और महंगा कर दिया गया है, उसे साधारण वस्तुओं की तरह मापते हुए और उसे मेडिकल डिवाइस न मानते हुए, जबकि सभी विकसित देशों में इससे हेल्थ प्रोडक्ट माना गया है और बहुत स्वाभाविक है, क्योंकि यह महिलाओं के माहवारी के उन पांच दिनों की स्वास्थ्य सुरक्षा और हाइजिन से जुड़ा हुआ है. एक अहम और अति गंभीर मुद्दा है, तो कैसे भारत सरकार इसे हल्के में ले कर महिलाओं के स्वास्थ्य से खिलवाड़ कर रही है!

होना तो यह चाहिए कि इतनी आवश्यक वस्तु को मुफ्त में प्रदान करने की योजना बनाई जानी चाहिए और गांव में उपलब्ध कराया जाना चाहिए और सरकार तो बिल्कुल उल्टा कर रही है! पहले ही एक बड़े प्रतिशत की पहुंच से दूर थे सैनिटरी नैपकिन और अब जो खरीद पाते हैं, उनका खरीदना भी असंभव कर रही है.

कुछ राज्यों ने सेनेटरी पैड कम दर पर उपलब्ध कराने की योजना बनाई, लेकिन वह दलालों की वजह से महंगे ही पहुंचे और कहीं तो वितरित ही नहीं हुए, साथ ही खराब क्वालिटी की शिकायतें भी सामने आई. आंकड़ों की बात करें तो अभी भी तेईस प्रतिशत से ज्यादा लड़कियां माहवारी शुरू होने के साथ ही स्कूल जाना छोड़ देती है पर्याप्त सुविधाएं न होने के कारण, स्वास्थ्य कारणों से और सरकार इतनी आवश्यक वस्तुओं पर टैक्स लगाकर महिलाओं के स्वास्थ्य शरीर सुरक्षा को ताक पर रखकर दोयम दर्जे का और लापरवाह रवैया दिखा रही है, इतने तमाम विरोध होने के बावजूद भी!

कहीं-कहीं महिलाओं के मध्य सैनिटरी नैपकिन को लेकर जागरूकता ना होने की वजह से और कुछ इतने महंगे होने की वजह से ग्रामीण अंचलों में रहने वाली महिलाएं, कम पढ़ी लिखी, दूर-सुदूर रहने वाली महिलाओं द्वारा कपड़ों के अलावा भी कुछ ऐसे व्यर्थ, अस्वास्थ्यकर पदार्थों का इस्तेमाल किया जाता है जो माहवारी के दौरान उन्हें संक्रमित करते हैं, गर्भाशय से जुड़े हुए रोग उत्पन्न करते हैं.

माहवारी, जो एक आवश्यक प्रक्रिया है सृजन की, उसी के प्रति उपेक्षा, लापरवाही पूर्ण और गैर जिम्मेदाराना रवैया दुखद है. कैसे सरकार ने अपनी नासमझी का परिचय देते हुए परिचय देते हुए महिलाओं से जुड़ी अन्य वस्तुएं चूड़ियां, सिंदूर, कुमकुम को जीएसटी से पूर्णतः मुक्त रखा है, महिलाओं के लिए इतने आवश्यक हेल्थ प्रोडक्ट सैनिटरी नैपकिन को मुफ्त में या बहुत कम दर पर देने की बजाय उसे महंगा कर उनकी पहुंच से और दूर कर दिया है, यही कारण है कि अभी भी महिलाओं के स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता और समाधान, परिवार और सरकार की चिंता का विषय नहीं है और गर्भाशय कैंसर से होने वाली मौतों की संख्या भारत विश्व में नंबर वन है, जो बहुत अफसोस की बात है। हम बुलेट ट्रेन की बात करते हैं, भारत की आधी आबादी की स्वास्थ्य सुरक्षा को दरकिनार कर के हम किस विकास के परचम लहराना चाहते हैं! किस खोखली धरातल पर बुलंदी छूना चाहते हैं!

सही मायनों में शक्ति पूजन तभी है जब हमारे घर परिवार में उपस्थित जीवंत शक्ति प्रतिमाओं, सृजन की अधिष्ठात्री देवियों की स्वास्थ्य सुरक्षा को सुनिश्चित करके स्वयं सशक्त बने और देश को मजबूत बनाएं.

जख्म

जख्म जब तक हरा नहीं होता
दर्दे-गम का पता नहीं होता
काम आये न दूसरों के जो
आदमी वो भला नहीं होता
तुम जुदा मुझसे हो गये फिर भी
दर्दे दिल से जुदा नहीं होता
जब तलक हादसे नहीं होते
जिंदगी में मजा नहीं होता
जर्रे-जर्रे में है खुदा लेकिन
कोई जर्रा खुदा नहीं होता
बेच देती जो उन उसूलों को
घर-घर में भी क्या नहीं होता
सब नजर का गुमान है यारों
कुछ भी अच्छा-बुरा नहीं होता

-डॉ. माधुरी त्रिपाठी
पिता- स्व. श्री एस.एल. त्रिपाठी
शिक्षा- एम.ए. हिन्दी, समाजशास्त्र, पी.एच.डी., एम.बी.ए. **कार्य की प्रकृति-** शासकीय सेवक होने के साथ-साथ समाज सेवा के क्षेत्र में सतत् सक्रिय योगदान।
संपर्क- बैकुंठपुर मोहल्ला, जगन्नाथ मंदिर के पास, रायगढ़, छ.ग.496001
मो0:9993557071

पहरा

विचारों में बहते सतरँगी पहरे,
जब शाम की सिलवटों में,
निरूशब्द रूप में छाते हैं।
तो ऐसा लगता है कि,
वक्त की धारा, अपने उलटे बहाव से
कटी जा रही हो।
पता नहीं, यह अवसाद कब तक,
हृदय में जमता रहेगा।
सारी संस्कृति की बनावटी छाया,
इस आक्रामकता को तोड़ने के बजाए,
इसे ठोस आधार देती जा रही हैं।
पर मन में छुपी कई अभिलाषाऐं,
कभी-कभी चेतना को झकझोर कर कहती हैं,
कि अवसाद तुमने ही जमने दिया,
विरासत को तुम जिंदगी भर ढोती रही।
पर मिला क्या?
सिवाय परंपरा के वंशवृक्ष को सींचने के।
एक लम्बी उम्र गुजार दी,
उसके बाद क्या था बचा,
न वो सात रंग रहे, और न ही वो विचार,
बचा तो केवल पहरा
सिर्फ पहरा

-आकांक्षा भट्ट
पिताः अशोक कुमार भट्ट
शिक्षा-एम.ए, एफ.फिल
मो-9473542475 ई-मेल- aaakanshabhatt12345@gmail.com

लैंगिक हिंसा-मनोसामाजिक परिप्रेक्ष्य

वेदों में स्त्री पुरुष को समान मानते हुए इन्हें एक गाड़ी के दो पहिए कहा गया है. यानि दोनों में समरसता और सामंजस्य अत्यंत आवश्यक है. वैदिक काल में पितृकुल और पतिकुल दोनों में ही नारी को विशेष सम्मान प्राप्त था.

-डा.सुनीता जाजोदिया
जन्म-28.07.1965, सम्प्रति-विभागाध्यक्ष -हिन्दी, वोमेन क्रिश्चियन कॉलेज चेन्नई
संपर्क-द्वारा मंगल ज्योथि, नं० 86, एम.सी. रोड, चेन्नई-21, मो०: 9841139991,
ईमेलः dr.sunitajajodia@gmail.com

स्त्री एवं पुरुष ईश्वर की अनुपम सृष्टि है. सृष्टि विकास में दोनों की सहक्रिया आवश्यक और सहभागिता अनिवार्य है. ये दोनों मानव जाति के दो प्रमुख जैविक लिंग हैं, जो शारीरिक संरचना में एक दूसरे से पूर्णतः भिन्न हैं. यह भिन्नता ही इन लिंगों की विशिष्टता है. यह जैविक विशिष्टता दोनों को परस्पर आकर्षित करती है जिससे ये विवाह में बंधकर परिवार की सृष्टि कर समाज का निर्माण करते हैं. ये दोनों महतत्वपूर्ण सामाजिक इकाई हैं.

लैंगिक समानता की अवधारणाः वेदों में लैंगिक समानता की सामाजिक अवधारणा के अंतर्गत स्त्री पुरुष को समान मानते हुए इन्हें एक गाड़ी के दो पहिए कहा गया है यानि जीवन में गतिशीलता के लिए दोनों में समरसता और सामंजस्य अत्यंत आवश्यक है. साथ ही नारी के सृजनशील मातृत्व गुणों की स्तुति करते हुए मातृदेवो भवः कहा है. ऋग्वेद में नारी को ब्रह्मस्वरूपा मानते हुए कहा-स्त्रीहि ब्रह्मभूविथ नारी को ही सरस्वती के स्वरूप में स्वीकृत कर ज्ञान की देवी माना गया है. वैदिक काल में पितृकुल और पतिकुल दोनों में ही नारी को विशेष सम्मान प्राप्त था. कन्या रूप में वह सरस्वती और विवाहिता के रूप में वह गृहसाम्राज्ञी थी. किंतु कालांतर वैदिककालीन लैंगिक समानता की अवधारणा विकारग्रस्त होकर एकांगी हो गई है. वर्तमानकाल में पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था में पुरुष को श्रेष्ठ और नारी को हीन व दोयम दर्जे की माना जाने लगा. इस लैंगिक भेदभाव के मूल में सामाजिक परंपराएं और मान्यताएं हैं जो दोनों में अंतर पैदा करती हैं. पुरुष स्वामी है, मुखिया है, कर्ताधर्ता है, रक्षक और शक्तिशाली है. नारी अबला है, दासी है, कामिनी है, संतान की जन्मदात्री (कुल का वारिस) है. उसकी कोई स्वतंत्र सोच और अस्तित्व नहीं है. यहाँ तक कि उसके अपने जीवन और देह पर भी उसका हक नहीं है. स्त्री की प्रजनन -शक्ति को मातृतत्व की कोमलता से जोड़कर सदा के लिए उसकी कमजोरी बना दिया. सारे अधिकार पुरुष के जिम्मे और नारी के हिस्से केवल कर्तव्य. इस असमानता के कारण नारी दमित और शोषित होती रही. नारी की कोमल और कमनीय देह पुरुष की भोगी प्रवृत्ति के कारण लैंगिक हिंसा का मूल कारण बन गई. महिला सशक्तिकरण और आंदोलन के पिछले दशकों में इसलिए सबसे पहले नारी ने दमन और शोषण के विरोध में अपनी देह के फैसले सुनाकर स्वयं को देह की वर्जनाओं से मुक्त किया. बीसवीं सदी के अंतिम दशक से वर्तमान साहित्य तक नारी -मुक्ति की यह अनुगूंज स्पष्ट सुनाई देती है.

लैंगिक हिंसा के आंकड़े-आजादी के बाद तेजी से घटते लिंगानुपात में स्त्रियों की निम्न सामाजिक स्थिति स्पष्ट झलकती है. 2011 की जनगणना के अनुसार लिंगानुपात 943 प्रति हजार है. सन 1901 में यह 972 प्रति हजार था जो वर्तमान दर से कहीं अधिक है, जिससे आजादी से पहले नारी की बेहतर सामाजिक स्थिति का पता चलता है. 2001 में लिंगानुपात घटकर 933 मात्र था. लैंगिक अनुपात के ये आंकड़े मानव अस्तित्व पर भावी संकट के रूप में उभरने लगे तो यह एक ज्वलंत सामाजिक मुद्दा बना और भ्रूण-हत्या व कन्या-मृत्यु दर का सत्य सामने आया.

हाल ही में प्रकाशित केंद्रीय सांख्यिकी संगठन की रिपोर्ट के अनुसार भारत में वर्ष 2001 से 2005 के अंतराल में करीब 6,82,000 कन्या भ्रूण, हत्याएं हुई है. इसका अर्थ यह है कि इन चार सालों में प्रतिदिन 1800 से 1900 कन्याओं को जन्म से पहले ही मार डाला गया.

विश्व के अधिकतर देशों में प्रति पुरुषों के पीछे लगभग 105 स्त्रियों का जन्म होता है जबकि भारत में केवल 93 स्त्रियां हैं. संयुक्त राष्ट्र का कथन है कि भारत में अवैध रूप से अनुमानित

तौर पर प्रतिदिन 2,000 अजन्मी कन्याओं का गर्भपात किया जाता है. यूनिसेफ के अनुसार विश्व जनसंख्या में से 10 प्रतिशत महिलाएं लुप्त हो चुकी है जबकि लैंगिक हिंसा के कारण भारतीय जनसंख्या में 5 करोड़ लड़कियां एवं महिलाएं गायब है.

महिला और बाल विकास विभाग के आंकड़ों के अनुसार प्रति 52 मिनट में एक बलात्कार, प्रति 26 मिनट में महिलाओं को परेशान करने का एक मामला, प्रति 42 मिनट में एक अपहरण, प्रति 51 मिनट में छेड़छाड़, प्रत्येक एक घंटा 42 मिनट में दहेज के कारण हत्या और प्रत्येक सात मिनट में महिलाओं के प्रति एक आपराधिक मामला घटित होता है. इन आंकड़ों से इतर ऐसे कई हजार मामले होंगे जो मान, श्रम, धन व लंबा समय खर्च करने का साहस न होने के कारण अपराध की काली दुनिया में प्रकाश में ही नही आते हैं व पड़ोसी के घर की कहानी अथवा मोहल्ले का किस्सा मात्र बन कर रह जाते हैं.

लैंगिक हिंसा का स्वरूप : नारी के प्रति लैंगिक हीनता एवं भेदभाव की मानसिकता समाज में इतने गहरे रूप में व्याप्त है कि जीवन के आठ माह पहले गर्भ से ही हिंसा का सिलसिला आरंभ हो जाता है. भ्रूण अवस्था से वृद्धावस्था तक कन्या भ्रूण हत्या, दुष्कर्म, यौन हिंसा, घरेलू हिंसा, दहेज हत्या, मान हत्या, तेजाब हमला, प्रेम प्रस्ताव ठुकराने पर हत्या आदि कई प्रकार की हिंसा से सामना होता है नारी का. सृजन की भूमि नारी प्रजाति के नष्ट होने से पुरुष बीज स्वतः ही बंजर हो जाएगा जब उसके भ्रूण को धारण करने वाली नारी ही इस धरती से लुप्त हो जाएगी. मानव और सामाजिक व्यवस्था पर इस गहराते भावी संकट की चिंता में 'बेटी बचाओ' की गुहार आज गूंज रही है. इस आंदोलन का जनमानस पर प्रभाव आने वाली सदियों में लैंगिक हिंसा के बेजान आंकड़े ही बयान करेंगे.

गर्भस्थ शिशु के रोग को पहचानकर जन्म से ही स्वस्थ मानव जीवन देने की कोशिश में आरंभ किया गया लिंग परीक्षण अंततः कन्या भ्रूण हत्या के रूप में विकृत होकर मानव के अस्तित्व के लिए ही गहन संकटदायी हो गया. लिंग निर्धारण में होने वाली गलतियों के कारण नर-भ्रूण भी बेमौत मारे जाते होंगे. इस पक्ष पर यदि गौर किया जाए तो संभवतः कन्या भ्रूण हत्या के प्रति मानसिकता में कुछ बदलाव हो.

स्वतंत्रता के बाद संवैधानिक रूप से नारी को पुरुषों की तरह समान अवसर और अधिकार तो मिले किंतु लैंगिक समानता की मानसिकता और व्यवहार न मिला. शिक्षित होकर ध नार्जन कर अत्मनिर्भर होने के बावजूद पुरुष की सोच आज भी उसे अपने समकक्ष स्वीकार न कर अबला और अधीनस्थ मानती है. स्त्री पर शासन करने की सामंती सोच आज भी पुरुष समाज के अचेतन मन में विद्यमान है. परिणामतः स्त्री के प्रति नजरिया और व्यवहार इक्कीसवीं सदी में भी व्यापक तौर पर आदिम और पाश्विक है. इसका हिंसात्मक प्रतिबिंब नारी के खिलाफ बढ़ते अपराधों के ग्राफ से पता चलता है.

दिल्ली में दिसंबर 2014 को निर्भया मामले के सामूहिक बलात्कार के नृशंस व घिनौने अपराध ने मानवता को शर्मसार कर समाज को कलंकित किया है. इस कांड ने स्त्री, पुरुष और समाज तीनों के संबंध और लैंगिक हिंसा की असमाजिक मानसिकता पर अनेक सवाल खड़े किए हैं. निर्भया से लैंगिक हिंसा के विरोध और आक्रोश की देशव्यापी जनलहर उमड़ी थी जिसमें महिलाओं के प्रति ऐसे घिनौने व्यवहार की निंदा की और कड़े दंड की सिफारिश की थी. फिर भी कुछ विशेष बदलाव सामाजिक मानसिकता में नजर नहीं आता क्योंकि दुष्कर्म के मामलों में निरंतर बढोत्तरी ही हुई है.

गृहलक्ष्मी की छवि को बनाए रखने के लिए नारी ताने प्रताड़नों की घरेलू हिंसा को नियति मान झेलती है. हर स्त्री इसे अपने जीवन में अवश्य झेलती है. घरवालों द्वारा की गई ऐसी हिंसा के मामले अक्सर घर में ही दफन हो जाते है. हत्या अथवा आत्महत्या के मामले प्रकाश में आने पर घरेलू हिंसा का पर्दाफाश होता है. महिलाओं को तत्काल अथवा आपातकालीन राहत पहुंचाने के लिए घरेलू हिंसा अधिनियम 2005 में बनाया गया. धारा-2(छ) एवं 3 के अनुसार-शारीरिक दुव्यर्यहार अर्थात शारीरिक पीड़ा, अपहानि या जीवन या अंग या स्वास्थ्य को खतरा या लैंगिक दुव्यर्यहार अर्थात महिला की गरिमा का उल्लंघन, अपमान या तिरस्कार करना या अतिक्रमण करना या मौखिक और भावनात्मक दुव्यर्वहार अर्थात अपमान, उपहास, गाली देना या आर्थिक दुव्यर्यहार अर्थात आर्थिक या वित्तीय संसाधनों जिसकी वह हकदार है से वंचित करना ये सभी घरेलू हिंसा कहलाते हैं.

घरेलू हिंसा की प्रस्तुत व्याख्या में देवी के रूप में महिमामंडित भारतीय नारी की हीनता एवं निम्नता को प्राप्त घरेलू छवि का हिंसक यथार्थ सामने आता है. महादेवी वर्मा के अनुसार-भारतीय नारी की मूल समस्या असंतुलन है. ...उसमें कहीं असाधारण दीनता है और कहीं असाधारण विद्रोह.

घरेलू हिंसा का एक सच यह भी है कि पुरुष के साथ इसमें बहुधा स्त्रियां

भी समान रूप से दोषी पाई जाती है जिससे 'स्त्री ही स्त्री की दुश्मन है 'कि धारणा को बल मिलता है. सास बहू के रिश्ते में, ताने उलाहने, प्रताड़ना मे घरेलू हिंसा के अनेक रूप पाए जाते है. दहेज से आरंभ होने वाले सास बहू के हिंसक संबंध 21वी सदी में कन्या भ्रूण हत्या तक पहुंच गए हैं जिसमें बेटा पैदा न होने और लगातार लड़कियां पैदा होने पर सास अत्याचार की हदें पार कर लिंग परीक्षण के द्वारा भ्रूण हत्या का फैसला करती है. इस फैसले को मानना बहू की विवशता होती है अन्यथा उसे घर, बच्चे, पति एवं संपत्ति से बेदखल किए जाने का सामाजिक भय होता है. बेटे को जन्म देने में ही नारी जीवन की श्रेष्ठता मानने की मनोसामाजिक ग्रंथि से ग्रस्त सास कुल का वारिस पाने के लिए बहू को प्रताड़ित करती है, दहेज के लिए भी इसी संदर्भ में प्रताड़ित करती है और पति अथवा बेटे के साथ मिलकर दहेज व कन्या भ्रूण हत्या को अंजाम देती है.

आज आनर किलिंग के मामले भी बढ़ रहे है. इसमें बेटी के प्रेमी की पिता - भाई-आदि पुरुष परिजन मिलकर हत्या कर देते हैं. परिवार की सामाजिक मर्यादा और शान से निम्नतर विधर्मी या विजातीय युवक से शादी करने के पुत्री के फैसले के खिलाफ पितृसत्ता का आक्रोश मान हत्या का हिंसक मार्ग अपना कर अधिकार और शक्ति प्रदर्शन की अहं तुष्टि करता है. आनर किलिंग नारी (बेटी) के खिलाफ हिंसा का वह रूप है जिसमें स्त्री और पुरुष (प्रेमी युगल) दोनों ही इस हिंसा का शिकार होते हैं. स्त्री के प्रति हिंसा को उसके प्रेमी पुरुष में प्रत्यारोपित करने की मनोसामाजिक ग्रंथि है मान हत्या. मनुष्यों की इन हत्याओं में मानव के अचेतन में बैठे शील मर्यादा की सामाजिक मान्याएं हैं जो चेतन मन के पराअहं की नैतिकता और शुचिता के आदर्शों की स्थापना के लिए क्रूरता की हदें पार कर अमानवीयता की हद तक हिंसक हो जाती है. ऐसा लगता है मानो गर्भ में जो कन्याएं, भ्रूण हत्या से बाल बाल बच गई हों वे युवावस्था में मान सम्मान की वेदी पर बली चढ़ा दी गई हों. कन्या से जुड़ी पराई अमानत, कन्यादान, दहेज, बोझ और सतीत्व की रूढिवादी मान्यताएं, पुत्रमोह व उससे जुडी वंशबेल और सद्‌गति की सामाजिक धारणाओं के मकड़जाल में फंसे पुरुष की छटपटाहट मानहत्या के आक्रोश में स्पष्ट उभरती है. सामाजिक वर्जनाओं और कलंक के आतंक से मनोविकारग्रस्त पति-पत्नी, बाप-बेटी, भाई-बहन के लैंगिक संबंध सामाजिक फलक पर हिंसा और अपराध ा की समस्या बनकर उभरते हैं.

> **आनर किलिंग के मामले भी बढ़ रहे है. मानो गर्भ में जो कन्याएं, भ्रूण हत्या से बाल बाल बच गई हों वे युवावस्था में मान सम्मान की वेदी पर बली चढ़ा दी गई हों. कन्या से जुड़ी पराई अमानत, कन्यादान, दहेज, बोझ और सतीत्व की रूढिवादी मान्यताएं, पुत्रमोह व उससे जुडी वंशबेल की सामाजिक धारणाओं के मकड़जाल में फंसे पुरुष की छटपटाहट मानहत्या के आक्रोश में स्पष्ट उभरती है.**

लैंगिक हिंसा और कानून-स्त्री अधिकारों की रक्षा और सामाजिक सशक्तिकरण के लिए भारतीय दंड संहिता (आईपी स्त्री अधिकारों की रक्षा और सामाजिक सशक्तिकरण के लिए भारतीय दंड संहिता (आईपीसी) और दंड प्रक्रिया संहिता (सीआरपीसी) की विभिन्न धाराएं हैं. कई विशेष कानून भी हैं जैसे-सती निषेध, बाल विवाह रोक अधि ानियम, हिंदू दत्तक एवं भरण पोषण अधिनियम, दहेज रोक अधिनियम, अनैतिक देह व्यापार रोक अधिनियम, लिंग परीक्षण रोक कानून, घरेलू हिंसा रोक अधिनियम आदि.

देश में मौजूद 36 कानूनों के बावजूद महिलाओं पर अत्याचार बढ़े हैं, यह चिंताजनक है क्योंकि कानूनों को लागू कराने की जिम्मेवारी जिस नौकरशाही व्यवस्था पर है वह बेअसर है. अरविन्द कुमार सिंह, अधिवक्ता महिलाओं के हितों से जुड़े कानूनों के पैरवीकार.

कानून और सुधार के परस्पर 36 के आंकड़े ने स्त्री की सामाजिक स्थिति को बदतर करने में अहम भूमिका निभाई है. कानून, अधिकार और न्याय के त्रिकोण के समानांतर स्त्री, पुरुष और समाज के संबंधों का भी एक ऐसा त्रिकोण है जिसमें पुरुष एवं समाज की भुजाएं अधिक लंबी है और स्त्री की बहुत छोटी. भुजागत शक्ति ने पुरुष को श्रेष्ठता प्रदान की और स्त्री को हीनता. शक्ति-प्रयोग एवं प्रदशर्न का सीधा नाता हिंसा से है, इसीलिए आज नारी हर जगह हर पल हिंसा से पीड़ित हो रही है. भारत में 70 प्रतिशत महिलाएं किसी न किसी प्रकार से हिंसा की शिकार होती है.

लैंगिक हिंसा का मनोसामाजिक पक्ष-

लैंगिक हिंसा का आरंभिक बिंदु भेदभाव है. भेदभाव से ईर्ष्या की भावना पनपती है. लंबी और गहरी ईर्ष्या से हीनता के भाव पैदा होते हैं. इस हीनता की प्रतिक्रिया स्वरूप ईर्ष्या के आलंबन के प्रति द्वेष और घृणा के विकारी भाव जन्म लेते है और जब इसमें अहं का भाव समावेश होता है तो यह क्रूरता में बदल जाती है जिसकी परिणति आक्रामकता अथवा हिंसा में होती है. श्रेष्ठता और हीनता दो बिल्कुल भिन्न भाव हैं. इससे उपजने वाली मानसिक प्रतिक्रियाएं भिन्न होती है. इन दो विरोध ी एवं विसंगतिपूर्ण सामाजिक परिस्थियों में नारी के अवचेतन में अंतद्वन्द की स्थिति उत्पन्न होती है जिससे स्त्री-पुरुष संबंध में संघर्ष उभरता है और उनके परस्पर संबंध कटु और विषैले हो जाते हैं.

लैंगिक हिंसा के समकालीन संकट के समय में स्त्री और पुरुष को केवल लैंगिक दृष्टि से देखना बंद करना होगा. विशेषकर नारी को उसके मादा स्वरूप में देखने की कामुकता से परे समाज की एक महत्वपूर्ण इकाई मानना होगा, लैंगिक भेदभाव नहीं अपितु सहभागी की विकासात्मक सामाजिक दृष्टि अपनानी होगी. समाजशास्त्री जे.एल.मोरेनो के कथनानुसार भी व्यक्ति नहीं अपितु सामाजिक संबंध अधिक महत्वपूर्ण है. साधारणतया व्यक्ति को समाज समाज की सबसे छोटी इकाई समझा जाता है लेकिन वास्तव में संबंधों का जाल जिसमें एक व्यक्ति संवेगात्मक रुप से संबद्ध होता है-वास्तविक सामाजिक अणु है.

बदलती लैंगिक मान्यता- आज पढ़ी लिखी-नौकरीपेशा बेटियां अपनी कमाई से परिवार का बोझ उठाने के साथ दहेज जुटाने में भी सक्षम हैं. एकल परिवार के प्रचलन से बेटों द्वारा बूढ़े मां बाप की अवहेलना और परित्याग का चलन बढ़ा है. इस सामाजिक परिप्रेक्ष्य में बेटियां बूढ़े, अकेले, बेसहारे मां बाप का आर्थिक और भावनात्मक सहारा बनकर उनके जीवन को सरल बना सुख और सुकून की गंगा प्रवाहित कर बेटे की तरह परलोक तो नहीं पर इस लोक में सद्गति अवश्य प्रदान कर रही है. मां बाप की अर्थी को कंधा और मुखाग्नि बेटियों के देने से पुत्र -मोहभंग की शुरुआत हुई है, मगर नारी जन्म और जीवन का मार्ग अभी सुगम नहीं हुआ है.

आज नारी आंदोलन धार्मिक दर-दरगाहों पर महिलाओं के प्रवेश पर सदियों से घोषित वर्जनाओं का विरोध कर लैंगिक समानता स्थापित करने पर केंद्रित है.विरोध और विद्रोह से जन्में आंदोलन की प्रतिक्रिया भी हिंसात्मक ही होगी. लैंगिक हिंसा के बढते मामलों को समाजविद् नारी आंदोलन की प्रतिक्रिया के तौर में भी देखते हैं.

हिंसा का जन्म हिंसा से होता है, इसकी परिणति भी हिंसा में ही होती है किंतु हिंसा का समाधान हिंसा कदापि नहीं है. स्त्री-पुरुष में परस्पर प्रेम और समरसता के संवेग से हिंसा के क्रूर आवेग स्वतः ही घुल जाएंगे. वस्तुतः सामाजिक लैंगिक दृष्टि में आधारभूत बदलाव की सख्त आवश्यकता है.

भारतीय समाज में सीता की पवित्रता नारी से अपेक्षित है तो पुरुष को भी राम की मर्यादा अपनानी होगी. लोहा लोहे को काटता है, उसी प्रकार लैंगिक हिंसा की समस्या का प्रमुख कारण पुरुष है तो समाधान में भी पुरुष प्रमुख होगा. राष्ट्रीय महिला आयोग में नियुक्त प्रथम पुरुष सदस्य आलोक रावत के इस विचार में लैंगिक हिंसा के समाधान का संकेत है-'यदि हम नारी प्रबोधन हेतु कार्य करते हैं तो यह काफी नहीं है. पुरुषों को भी प्रक्रिया में शामिल करना महत्वपूर्ण है. अलग कोष्ठों में होने के बजाय, दोनो मिलकर अधिक बेहतर परिणाम प्राप्त कर सकते हैं.

लैंगिक सौहार्द और सद्भाव का समान व्यवहार स्त्री-पुरुष दोनो को अपनाना होगा. बेटे-बेटी के पालन में समानता व संतुलन की स्वस्थ मानसिकता का विकास कर 'लैंगिक निष्पक्ष परिवार' बनाने होंगे. इससे सामाजिक अचेतन में स्थित लैंगिक भेदभाव और हीनता की जड़ता को लैंगिक निष्पक्षता की गतिशील मानसिकता में बदला जा सकेगा. बदलाव की यह मनोसामजिक व्यवस्था भविष्य में, लैंगिक हिंसा के समाधान की दिशा में कानूनी प्रावधान से कहीं अधिक कारगर सिद्ध होगी.

हिन्दीतर भाषी रचनाकारः

मैं भूत बनकर आऊँगी

सुनो, मैं भूत बनकर आऊँगी
ये जो मैं रोज़ तिल-तिल कर मरती हूँ
उससे मैं थोड़ा-थोड़ा भूत बनती हूँ
मुझे यक़ीन है,
मैं जल्द ही पूरा मर जाऊँगी
मैं जल्द ही पूरा बन जाऊँगी
सुनो, मैं भूत बन कर आऊँगी
और तुम्हारी गंदी नज़रों की
रेखाओं को ६० अंश पे झुकार कर
तुम्हें तुम्हारा ही गंदा-घिनौना
रूप दिखाऊँगी/ये मत समझना,
कि मैं पीपल में लटकी रहूँगी
या शमशान में भटकती रहूँगी
मैं पान की टपरी में तुहारे बाजू में
खड़े होकर अपने होंठ लाल करूँगी
मैं भूत बन कर आऊँगी
मैं रात को १२ बजे मोमबत्ती लिए
वीराने में नहीं भटकूँगी
मैं बाइक पे आऊँगी
और जब तुम अपनी मर्दानगी के
नशे में चूर पब से बाहर निकलोगे
तो ज़ोर की एक लात मारकर
तुम्हें चारों खाने चित्त कर दूंगी
मैं, मैं भूत बर कर आऊँगी
मैं अपने लम्बे नाखूनों की
धार तेज़ कर रही हूँ
तंग गलियों में जब तुम्हारे
हाथ इधर-उधर बढ़ेगे
तो अपने तेज़ नाखूनों से
तुम्हारी कलाई की नस काट दूँगी
तुम्हारा जो ख़ौफ है ना,
उससे मैं ख़ौफ़नाक भूत बनकर
सिर्फ़ तुम्हारे लिए
मैं भूत बन कर आऊँगी
तुम्हें क्या लगता है,
मुझे गर्भ से गिरवा दिया तो
मैं चली जाऊँगी
नहीं, मैं भूत बन जाऊँगी
तुम्हें तुमसे ही डराने के लिए
तुम्हारे वीर्य में जाके बस जाऊँगी
मैं भूत बन कर आऊँगी
ये भी मत समझना,
सदियाँ लगेंगी मुझे भूत बनने में
और मेरी ज़िदगी नरक बना के
तुम अपनी ज़िदगी आराम से जी लोगे
'डारविंस थ्योरी ऑफ इवोल्यूशन'
तो पता होगा ना
मैं इवॉल्व हो जाऊँगी
मैं इवॉल्व हो रही हूँ
मेरे मानस की रीढ़ भी अब सीधी हो
रही है/मैं और मेरा भूत,
अब साथ साथ बढ़ रहे हैं
लो, मैं भूत बन भी गयी
जीता जागता भूत
ख़बरदार....

-ऋचा जैन जिंदल
39, टुर्नपाईक लिंक, ईस्ट क्रोयडान,
लंदन एण्ड सीआर05एनटी, यू.के.

एक आस

हर जिन्दगी की सुबह होती है
हर जिन्दगी की शाम होती है
कुछ रंगीन, कुछ
दर्दनाक होती है
इस चक्र में सब लगातार होती है
जन्म, जवानी, जरा और मृत्यु
ये सभी
के साथ चलती है
विशाल मानव-काया में,
मुठ्ठी भर धड़कन साथ होती है
छोटे से धड़कते दिल में
आत्मा अंगुष्ठ मात्र होती है
जिजीविषा भ्रमित कर देती है
मृगतृष्णा अनन्त होती है
जब ढलती है जीवन-संध्या,
जीवन-चक्र सुलझता है
बंद मुठ्ठी खुल जाती है, पर
एक आस लिए उम्र गुजर जाती है

-डा अनीता पंडा
द्वारा श्री बी.के. पंडा, अर्बन अफेयर्स
रेसिडेंसिअल काम्प्लेक्स, ६७ खार मलकी,
शिलांग-७६३००१, मेघालय
ईमेलःaneeta-panda@gmail.com
मो०: 09436730101

हिन्दीतर भाषी रचनाकारः

छुअन

सिर्फ छूना भर नहीं है,
तेरे अंतर की ऊष्मा का
मेरे अंतस की ऊर्जा बन जाना है
छूना है उन अनछुई सतहों को भी
जो खंडहर हो रही थीं
बिना किसी संवेग के
जागना है कुछ नई संभावनाओं का
वहाँ नव-निर्माण की
भीग जाना है मन के सूखे तालों का
फिर से
ये अलग बात है
तरंगित हो छुअन से
छलक जाए वो नयनों से ....
इसलिए छुअन सिर्फ
छूना भर नहीं
ऊपरी आकाश को
छू जाना है भीतर की धरती को भी।

-डॉ० मंजु रुस्तगी
शिक्षा :स्नातकोत्तर, एम. फिल., पीएच डी., पत्रकारिता में डिप्लोमा
सम्प्रति-हिंदी विभागाध्यक्ष, वल्लियाम्मल कॉलेज फार वूमेन, अन्ना नगर, चेन्नई, तमिलनाडु

बेटियाँ

-रेखा वर्मा
जन्मः21.05.1977, शिक्षाः एम.ए.(इतिहास, हिन्दी), एम.फिल.
संम्पर्कः न्यू नंबर -3, फर्स्ट मेन रोड, सबरी नगर, मुग्लीवक्कम, पोरुर, चेन्नई-600116,
मो0: 9092311651, 8939651662

होठों पर मुस्कान, और फूलों में सुगंध
की तरह होती है बेटियाँ,
दीये की ज्योति और मुरली की मंजुल
ध्वनि सी होती हैं बेटियाँ।
ज़िन्दगी ग़मगीन हो, मुश्किले कठिन हो तो
खुदा का नूर बन, मंजिलें दिखाती हैं बेटियाँ
अपनी प्यारी किलकारियों से सूने घर को
आबाद बनाती हैं बेटियाँ?
खुले तो हाथ, मिल जाये तो मुट्ठी
बन जाती हैं बेटियाँ
जीवन के विराने में, रोशनी विखेरती हैं बेटियाँ
हर दर्द का मरहम, कठिनाईयों का हल
होती है बेटियाँ।
जीवन को स्पन्दित करने वाली, बोझ क्यूँ?
समझी जाती हैं बेटियाँ
टेकलोलॉजी का शिकार बन, माँ की कोख में
सिसकती क्यूँ? दम तोड़ती है बेटियाँ
सारे ग़म दर्द और जुल्म क्यूं खामोशी से
सह जाती है बेटियाँ
खूबियों का ख़जाना होकर भी क्यूँ?
वैहश नज़रों का शिकार होती हैं बेटियाँ
बेटियों को बोझ न माने, गश्हस्थी ही नहीं
दिलों का बोझ कम करती हैं बेटियाँ
हो पल्लवित, मिले दिशा सहीं तो
चाँद-सूरज क्या चीज़ है, सारा आसमान
मुट्ठी में बंद कर सकती है बेटियाँ
लेखक की प्रेरणा, शिल्पकार की कल्पना बन
जीवन को आकार देती हैं बेटियाँ
सीता, राधा, मीरा, मरियम बन संसार को
नई दिशा देती है बेटियाँ।
मंदिरों की प्रार्थना, मस्जिदों की अजान
होती है बेटियाँ
बाईबिल की तरह पवित्र, और कुरान की
तरह पाक होती है बेटियाँ
दुआवों का समन्दर होती है बेटियाँ
प्रार्थना होती है बेटियाँ
पाक होती है बेटियाँ

कहानी

कर्ज़

‘पर पापा मेरा क्या सहारा? मैं तो एम०बी०ए० करने कैलीफोर्निया जा रही थी। बीच में मम्मा बीमार हो गयी।’ –‘तुम्हें जाना है तो जाओ अवि। मेरी चिन्ता मत करो मैं अकेला कहाँ हूँ तुम्हारी मम्मी की यादें हैं मेरे साथ। मेरा व्यवसाय है, मेरे सहयोगी हैं।

–डॉ० अमिता दुबे

जन्म –१५ मार्च, १९६७

शिक्षा-एम०ए०(हिन्दी, अर्थशास्त्र)एल.एल.बी,

सम्मान/पुरस्कार-पुरस्कृत कहानियाँ-१०, ‘पं० प्रताप नारायण मिश्र युवा कथाकार सम्मान, ‘शब्द माधुरी व शब्द भारती सम्मान‘, ‘शकुन्तला सिरोठिया स्मृति सम्मान, ‘साहित्य गौरव‘ सम्मान आदि।

सम्प्रति-सम्पादक, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान

संपर्क-‘नारायण कृपा‘ 539क/85, शेखपुर, कसैला, नारायण नगर, इन्दिरा नगर, लखनऊ-226016 मो०:9415551878

e-mail– amita.dubey09@gmail.com

‘आपको जीवन साथी की तलाश शुरू कर देनी चाहिए पापा।’ अवन्तिका ने नाटकीय अन्दाज में कहा-‘अभी इतना लम्बा जीवन कैसे कटेगा अकेले।’

‘तुम्हारे सहारे बेटा।’ गगन की आवाज जैसे कुएँ से आ रही थी।

‘पर पापा मेरा क्या सहारा? मैं तो एम०बी०ए० करने कैलीफोर्निया जा रही थी। बीच में मम्मा बीमार हो गयीं मैंने तो एण्टरेंस टैस्ट भी क्वालीफाई कर लिया था। उस समय आप मम्मा की वजह से बहुत परेशान थे इसलिए मैंने बताया नहीं। कल ही मेल आयी है अभी मेरी सीट भरी नहीं है। मुझे पढ़ने का मौका मिल सकता है कुछ लेट फीस के साथ।’ अवन्तिका मुख्य मुद्दे पर आ गयी।

गगन ने पत्नी गरिमा के चित्र की ओर देखकर कहा-‘तुम्हें जाना है तो जाओ अवि। मेरी चिन्ता मत करो मैं अकेला कहाँ हूँ तुम्हारी मम्मी की यादें हैं मेरे साथ। मेरा व्यवसाय है, मेरे सहयोगी हैं और सबसे बढ़कर आदिल है मेरा बचपन का साथी मेरा यार!’ गगन ने सामने से आते हुए आदिल को देखकर कहा।

आदिल ने अदब से सिर हिलाया और गले में पड़े गमछे से आँसुओं को पोंछा जो मालकिन गरिमा भाभी की याद में अनायास निकल आये थे। जब से भाभी अल्लाह को प्यारी हुई हैं तब से घर वीराना हो गया है। भाभी की हँसी पूरे घर को गुलजार करती थी। बात-बात पर चुटकुले सुनाकर ठहाके लगाना उनकी आदत थी।

बिटिया अवि और गगन भइया तो घर में कम ही रहते थे। भाभी का ज्यादातर वक्त आदिल के साथ बीतता था। इसलिए सबसे अकेला तो आदिल ही हुआ था। आदिल ने भाभी की तस्वीर को देखकर ठण्डी आह भरी।

‘वाह! रे परवरदिगार! तेरी कैसी रजा है। भाभी की उमर ही क्या थी? अभी तो इन आँखों ने उनकी डोली देखी थी मइय्यत भी देखने की गुनहगार हो गयीं ये आँखें, गगन के टोकने पर आदिल ने अवन्तिका से कहा-‘बिटिया रानी। आपको जहाँ भी जाना हो जाइये हम अपने मालिक का साथ नहीं छोड़ने वाले।’

वह तो ठीक है अंकल लेकिन मैं हमेशा तो इस घर में रहने वाली नहीं। पहले पढ़ाई पूरी करूँगी नौकरी करूँगीं, फिर शादी भी होगी। तब पापा अकेले कैसे रहेंगे। अवन्तिका ने बात खत्म करने से पहले दातों के बीच चीभ दबा ली। उसे लगा अभी शादी की बात नहीं करनी चाहिए थी। पापा क्या सोच रहे होंगे। मम्मी को गये अभी एक महीना भी नहीं बीता है उसे शादी की पड़ी है।

गगन ने सोचा-कितनी उतावली पीढ़ी है। अपने कैरियर की दीवानी अवन्तिका उल्टा-सीधा कुछ भी बोले जा रही है। यह नहीं जानती की गरिमा की बीमारी में काफी जमा पूँजी खर्च हो चुकी है कैलीफोर्निया जाने में 20–25 लाख का खर्च आना तो मामूली बात है। घर को गिरवीं रखकर पैसा तो मिल सकता है लेकिन कर्ज चुकाने के लिए लड़खड़ाते व्यवसाय को वह अकेले कैसे सम्हालेगा। अभी तक गरिमा थी तो ऑफिस का काम वह ठीक तरह से देख लेती थी। ऑडर आदि लाने के लिए उसे महीने में पन्द्रह दिन बाहर भटकना पड़ता था तब गरिमा की

कार्य-कुशलता देखते ही बनती थी। उसके पिता का खड़ा किया हुआ यह व्यवसाय अपने उत्तराधिकारी को ढूँढ़ रहा है।' गगन की आँख भर आयीं।

पापा 'बी प्रैक्टिकल' अवन्तिका ने गगन के आँसू देखकर कहा। 'रोने से मम्मा वापस तो नहीं आ सकतीं। हमने उनका 'सब्स्टीट्यूट' ढूँढ़ना होगा। 'अवन्तिका घाव पर घाव दिये जा रही थी।

गरिमा का कोई विकल्प हो सकता है भला। गरिमा तो गरिमा थी। उसके पापा उसे प्रिंसेज कहते थे। वह थी भी राजकुमारी की तरह। एकदम नाजुक, सुन्दर और आकर्षक। हमेशा हँसती रहती जब गगन उदास होता तो कहती- 'मित्र! उदास मत हो, जिन्दगी चार दिन की है जीभर जिओ गम को पियो, मस्ती करो और सब कुछ भगवान पर छोड़ दो।'

अनजाने में गगन के मुँह से निकला-'सब कुछ भगवान पर छोड़ दो अवि! तुम अपना काम करो वह अपना काम करेगा। कोई रास्ता दिखायेगा' 'पापा आप बैठे रहो भगवान के भरोसे मैं तो चली पैसे का इंतजाम कर दो मुझे पन्द्रह दिन में जाना है। कुछ फॉरमेल्टी पूरी करनी है फिर उड़ जाऊँगी।' अवन्तिका बिल्कुल भावुक नहीं थी। उसने पूरी योजना बना रखी थी। उसका मित्र प्रखर पहले ही जा चुका था। उसने ही कोशिश कर उसकी सीट रुकवायी थी। अवन्तिका ने सोचा इस समय अगर कमजोर पड़ी तो जिन्दगी बहुत पीछे छूट जायेगी। प्रखर के पापा की एक ही शर्त थी लड़की प्रखर की तरह एम०बी०ए० हो किसी भी जाति-बिरादरी की हो चलेगी लेकिन पढ़ाई से समझौता नहीं। मम्मी के मरने पर प्रखर नहीं आ सका था। उसका मैसज आया था मोबाइल पर 'वैरी सैड, बट थिंक अबाउट फ्यूचर कम सून' इस सन्देश के बाद अवन्तिका की दिशा बदल गयी थी। कल तक उसे लगता था पापा अकेले हो गये हैं वह उन्हें छोड़कर कैसे जायेगी पता नहीं पापा कैसे रहेंगे उसके और मम्मी के बिना। लेकिन प्रखर उसका भविष्य था पापा से अलग सुनहरा भविष्य।

आदिल ने टोका-'क्या कह रही हो बिटिया। अभी तो भाभीजान की चिता भी ठण्डी नहीं हुई और तुम जाने की बात करने लगी। यह भी नहीं पूछा पापा! तुम्हारे पास कुछ बचा भी है या नहीं।'

'बचा क्यों नहीं होगा। मेरे नाना का इतना बड़ा बिजनेस है और आप कह रहे हैं कुछ बचा भी है? तुम्हारी मम्मी के इलाज में बहुत खर्च हुआ।' गगन ने कहा-'तो समुद्र से कुछ बूँदें या पानी की बाल्टियाँ भी निकाल ली जायें तो क्या समुद्र का पानी कम होता है। डैडी लगता है आपने बिजनेस पर ध्यान नहीं दिया। मम्मी तो केवल छः महीने बीमार रहीं। बिजनेस तो तीस बरस पुराना है और आपके पास पिछले पन्द्रह बरसों से है जब से नाना गुजर गये। नहीं तो नाना ही सब देखते थे। अवन्तिका गगन को याद दिला रही थी कि अब वह इस बिजनेस की मालकिन है।

गगन को गरिमा के साथ बिताये दिन बहुत शिद्दत से याद आ रहे थे। पुराने लखनऊ का वह छोटा सा मुहल्ला जहाँ नये लखनऊ की कॉलोनी संस्कृति अभी नहीं पहुँची थी। एक-दूसरे से जुड़ी छोटी-छोटी गलियाँ जिनमें बच्चे गुम्मो का विकट बनाकर कपड़ा कूटने वाली थपकी से क्रिकेट खेलते आज भी देखे जा सकते हैं रहता था गगन और सामने के मुहल्ले में रहती थी गरिमा। गगन की गली में रहने वाली राबिया से गरिमा की दोस्ती थी। दोनों साथ-साथ लखनऊ के महिला कॉलेज में पढ़ने जाती थीं।

बाद में गरिमा और राबिया ने विश्वविद्यालय में एडमीशन लिया। राबिया का गगन के परिवार में घर जैसा आना-जाना था। वह गगन को राखी बाँधती थी। राबिया को विश्वविद्यालय जाने की इजाजत भी गगन के कारण ही मिली थी। उसने राबिया की अम्मी को विश्वास दिलाया था कि वह राबिया को अपने साथ विश्वविद्यालय ले जायेगा और वहाँ उसका पूरा ध्यान रखेगा। गगन ने किया भी ऐसा।

आदिल गवाह है राबिया, गगन और गरिमा की दोस्ती का। वे चारों अपनी-अपनी साइकिलों पर यूनीवर्सिटी जाते। अपनी-अपनी क्लास करने के बाद टैगोर लाइब्रेरी में इकट्ठा होते थोड़ी देर पढ़ाई की चिंता करते फिर साइकिल के साथ पैदल-पैदल आर्टस कॉलेज होते हुए मनकामेश्वर मंदिर तक जाते। गगन और गरिमा मंदिर में दर्शन करते तो राबिया और आदिल उन दोनों का इंतजार करते।

गरिमा आदिल को भाईजान कहती और राबिया गगन को भाईसाहब। अनोखा रिश्ता था। उन चारों के बीच राबिया आदिल को पसन्द करती थी लेकिन आर्थिक ऊँच-नीच की दीवार उन दोनों के बीच खड़ी थी। राबिया हिम्मत नहीं कर सकी और उसकी शादी अपने चचाजाद से हो गयी वह दुबई चली गयी और आदिल आज भी अकेला है। दोनों कभी-कभी गोमती के किनारे कुड़िया घाट पर शाम ढ़ले बैठ कर पुराने दिनों की याद में खो जाते। समय तेजी से बीतता जा रहा था।

गरिमा अपने पिता की इकलौती

सन्तान थी। गगन से शादी होने के बाद भी वह अपने पापा का हाथ बँटाने ऑफिस जाती रही थी। गगन अपनी नौकरी के सिलसिले में जब कभी बाहर जाता तो गरिमा अपने पापा के पास रुक जाती अवन्तिका तो स्कूल से सीधा गरिमा के पास ऑफिस ही चली जाती। देर शाम को दोनों घर लौटतीं कभी-कभी ज्यादा थके होने पर गरिमा होटल से खाना पैक करवा लाती थी और तीनों खाकर आराम करते अगले दिन की तैयारी में।

गरिमा के पापा को पैरालिसिस का अटैक पड़ा। उन्होंने गगन से बिजनेस में हाथ बँटाने का आग्रह किया। गगन टाल गया उनकी हालत दिनों-दिन बिगड़ने लगी। पुराने कर्मचारी गरिमा को सहारा देने के बजाय चकमा देने लगे। ऐसे में गगन को नौकरी छोड़कर गरिमा का साथ देना पड़ा। गरिमा के पापा अपाहिज बन पाँच वर्ष बिस्तर पर पड़े रहे। गगन-गरिमा को अपना घर छोड़कर उनकी देखभाल के लिए उनके साथ रहना पड़ा। एक दिन वकील बुलाकर गरिमा के पिता ने एक वसीयत की उनके मरने के बाद उनकी चल-अचल सम्पत्ति गरिमा की और उसके बाद अवन्तिका की। गगन कहीं बीच में नहीं था। गरिमा तो राजकुमारी थी अपने पापा की लेकिन अवन्तिका तो नाना की महारानी थी। धीरे-धीरे उसके अधिकार की भावना बढ़ती गयी। उसकी जायज व नाजायज माँगें पूरी होती गयीं और वह मुँहफट, चिड़चिड़ी और बदतमीज होती चली गयी।

नाना के बाद गरिमा ने उसे सुधारने की कोशिश की तो उसने हॉस्टल में रहने की जिद ठान ली। गरिमा के पूछने पर एक ही शहर में हॉस्टल में रहने का क्या मतलब? तो बड़ी बदतमीजी से बोली-'पढ़ाई हॉस्टल में ही हो सकती है। आप कहो तो अमेरिका, इंग्लैण्ड चली जाऊँ। बैंक खाते में पैसा डाल दो बस।' गरिमा सन्न रह गयी थी। उसने बड़े दुःख से गगन से कहा था-'गगन यह बेटी नहीं मेरी दुश्मन है। देखना हमारा चैन कैसे नष्ट करेगी।' गगन ने उस समय कुछ नहीं कहा था बस गरिमा का कंधा थपथपा कर रह गया था।

आदिल ने टोका-'क्या कह रही हो बिटिया। अभी तो भाभीजान की चिता भी ठण्डी नहीं हुई और तुम जाने की बात करने लगी। यह भी नहीं पूछा पापा! तुम्हारे पास कुछ बचा भी है या नहीं।'
'बचा क्यों नहीं होगा। मेरे नाना का इतना बड़ा बिजनेस है और आप कह रहे हैं कुछ बचा भी है?

आज वही अवन्तिका उसे जीवन साथी की तलाश करने का सुझाव देकर पूरे बिजनेस का मानो हिसाब माँग रही थी। पैर पटक कर घर से बाहर जाती बेटी को देखकर गगन ने एक निर्णय लिया गरिमा की सम्पत्ति से अलग होने का निर्णय। यह सम्पत्ति उसकी पत्नी की थी। गरिमा ने तो बहुत बार कहा-गगन कम्पनी के शेयर में तुम्हारे नाम कर देती हूँ। अवन्तिका के तेवर तो अभी से ठीक नहीं हैं। गगन ने हँस कर कहा था-'तुम्हारे तेवर तो ठीक हैं पति-पत्नी का कहीं कुछ बँटा होता है। मुझे अवन्तिका से क्या लेना-देना। मैं तुमसे उम्र में बड़ा हूँ तुमसे पहले जाऊँगा। तुम माँ बेटी निपटती रहना आपस में।

गरिमा ने तुनक कर कहा था-'देख लेना तुम देखते रह जाओगे और मैं यूँ उड़ जाऊँगी' उसने हवाई जहाज के उड़ने का इशारा किया था। ठगा सा ही तो छोड़कर चली गयी थी गरिमा अचानक।

आदिल को याद आया गरिमा भाभी के पापा जी के बीमार पड़ने के बाद गगन भइया ने घर को अस्पताल बना दिया था। एक डॉक्टर एक्ससाइज कराने आता थ। उसने सुझाव पर सिरहाने से ऊपर उठने वाला पलंग खरीदा गया था। उससे पापा जी को लेटे-लेटे ही बैठा दिया जाता था। खाना वगैरह खिलाने में भी आराम हो गयी थी। पापा जी के बाद गगन भइया ने उस पलंग को पास के अस्पताल में दान देने को कहा तो भाभी ने कहा था-'थोड़े दिन पड़ा रहने दो पापा की उपस्थिति का आभास करायेगा। फिर किसे पता भविष्य में जरूरत पड़ सकती है। 'तुम बीमार नहीं पड़ सकतीं क्या? भाभी-भइया को चिढ़ा रहे थे किसे पता था माता सरस्वती जिह्वा पर विराजमान हो गयी थीं गरिमा की। लेकिन उसके बाद वह कमरा ज्यों का त्यों बंद कर दिया गया था पापा जी के कुछ सामानों के साथ। कभी-कभार भाभी अपने सामने कमरे को खुलवाकर सफाई करवातीं और हर एक चीज को छू-छूकर देखतीं मानो पिता को अनुभव कर रही हों, सहला रही हों।

ठीक ऐसे ही गगन भइया आज

करने आये हैं उस कमरे में जहाँ पिछले छः महीने भाभी लगातार रही हैं। हँसती-खेलती जिन्दगी में मानो जलजला आ गया। गरिमा का स्वास्थ दिन पर दिन गिर रहा था। फेमली डॉक्टर ने संजय गांधी आयुर्विज्ञान संस्थान में दिखाने के लिए रिफर कर दिया। गगन का सहपाठी वहाँ डॉक्टर है। प्रारम्भिक जाँच में ही 'लीवर डैमिज' हो रहा है की बात सामने आयी फिर तो बीमारियाँ ही बीमारियाँ जुड़ती चली गयीं। अस्पताल में कैंसर का पता चलने पर घर लौटते हुए भाभी ने बैडरूम की जगह पापा जी के कमरे में रहने की इच्छा व्यक्त की थी। अगले दिन ही कमरे की साफ-सफाई करवा दी गयी थी वैसे भी आपरेषन के लिए मुम्बई जाने से पहले गरिमा भाभी एक-एक चीज को छू-छूकर देख गयी थीं।

इतनी तकलीफ में भी भाभी हँसती-मुसकुराती रहती थीं। एक नर्स चौबीस घण्टे उनके पास रहती थी। उसके सधे हाथों और खिंचे चेहरे के बीच वे सामंजस्य खोजते हुए अक्सर कहती थीं-'सिस्टर कामना! आपकी कौन सी कामना अधूरी रह गयी जो इतना परेशान दिखती हो।' फिर खुद ही कहतीं- 'वैसे किसी अनजान व्यक्ति का ऐसा-वैसा सारा काम करना कोई आसान बात तो है नहीं।'

कामना कहती-'नहीं मैम! हमारी ट्रेनिंग में सिखाया जाता है कि मरीज के आराम का ध्यान रखो फालतू बातचीत मरीज को परेषान कर सकती है।'

'बातचीत से किस कमबख्त को परेशानी होती है न जाने कितनी साँसों की मोहलत मिली है कम से कम हँस-बोल तो लूँ। फिर तो यह संसार छूट ही जायगा।'

कमरे के बाहर खड़े आदिल और गगन रो पड़ते। अवन्तिका कहती-'मम्मा तुम कहाँ जा रही हो। चुपचाप दवा खाओ और सो जाओ बहुत जल्दी चंगी हो जाओगी।' हॉस्टल में रहने वाली बेटी कितनी बदली-बदली लगने लगी थी गगन को।

वही अवन्तिका आज गगन को कटघरे में खड़ा कर रही थी। गगन ने अवन्तिका की इच्छा के अनुसार मकान के कागज बैंक में गिरवी रखकर उसके 'एजूकेशनल लोन' की व्यवस्था कर दी थी। इस शर्त के साथ कि यदि अवन्तिका इस कर्ज को नहीं चुकाती है तो बैंक को अधिकार होगा कि वह इस घर को नीलाम कर दे या अपना कर्ज वसूल करने के लिए चाहे कुछ भी करे। गगन का कोई लेना-देना इस 'डील' में नहीं था।

उसे तो गरिमा के प्यार-विश्वास के कर्ज को चुकाना था। बिना टूटे-बिना रोये बिना कुछ खोये गरिमा की स्मृतियों को संजोने का प्रयास करना था। गरिमा कहती थी-एक ही बेटी है गगन! वह ससुराल चली जायेगी। हम बुड्ढा-बुढ़िया ऋषिकेश चलेंगे। जहाँ गंगाजी के किनारे एक फ्लैट लेंगे और रात दिन गंगा जी को निहारेंगे। देखो ऐसा घर लेना जिसकी खिड़की से गंगा जी दिखायी दें। निर्मल-निर्मल गंगा जी, कलकल करती गंगा जी।

सचमुच इसी सपने को साकार करने चला है गगन। उसने आदिल को अपने गाँव लौट जाने के लिए बहुत कहा लेकिन वह नहीं माना। साथ रहने की जिद करता है पगला। नहीं जानता कब किसका साथ छूट जाये कौन कहाँ बिछुड़ जाय। कौन भीड़ में अकेला हो जाय। अभी दस वर्ष बहुत सारा काम किया जा सकता है सेवानिवृत्ति की उम्र ६० वर्ष होती है वह तो अभी ५१ का ही है। गरिमा के सपने को साकार करने के लिए उसने दोबारा नौकरी करने का मन बनाया है। बस उसका निश्चय अपने जैसे एकाकी उम्र की ढलान की ओर बढ़ने वालों को एक आसरा देने के लिए 'गरिमा कुटीर' बनाने का है। आदिल भी तो उसी के साथ बूढ़ा होने वाला है धीरे-धीरे।

क्या आप लिखते हैं?

अपने काव्य संग्रह, कहानी संग्रह, आलेख संग्रह इत्यादि के प्रकाशन हेतु संपर्क करें।

विशेष आकर्षण

1.प्रकाशन मात्र लागत मूल्य पर 2. बिक्री की व्यवस्था
3.प्रचार-प्रसार की व्यवस्था 4.विमोचन की व्यवस्था

विस्तृत जानकारी के लिए जवाबी लिफाफे के साथ लिखें
प्रसार सचिव
विश्व हिंदी साहित्य सेवा संस्थान,
एल.आई.जी-६३, नीम सरॉय कॉलोनी, मुण्डेरा, इलाहाबाद-211011, ई-मेलः sahityaseva@rediffmail.com मो०:9335155949

कहानी

एक मोड़ ये भी

-डॉ. मृणालिका ओझा

जन्म तिथिः १३.०२.१६५४, शिक्षाः एम.ए, पी.एच.डी.

संपर्कः-पहाड़ी तालाब के सामने, बंजारी मंदिर के पास, कुशालपुर, रायपुर (छत्तीसगढ़), ४६२००१, मो.-०७४१५०-१७४००

सोफिया, प्रतिज्ञा और रघु तीनों अभिन्न मित्र थे। हाई स्कूल तक की पढ़ाई तीनों ने एक साथ की। दसवीं कक्षा पहुंचते ही प्रतिज्ञा मे कुछ अप्रत्याशित शारीरिक लक्षण दिखाई देने लगे। इससे सभी उसका उपहास करते। प्रतिज्ञा व उसके माता-पिता परेशान रहने लगे। डॉक्टर ने बताया-वह ट्रांसजेंडर है। समाज के भय से माता पिता ने उसे उसके चाचा के घर छोड़ दिया।

ऐ सोफिया बता, तुझे मामू ने कित्ते पैसे दिए? प्रतिज्ञा ने एक हाथ से सोफिया का हाथ पकड़ रखा था, और दूसरे हाथ से रघु को ईशारा करके बुला रही थी। सोफिया हाथ छुड़ा कर भागी और गंदा नाला फलांगती हुई मानक सेठ की दुकान जा पहुँची। मुट्ठी खोलकर देखा-'अठन्नीऽऽ' जोरों से चिल्ला पड़ी। पिछले कई वर्षों से ये तीनों एक साथ खेलते, पढ़ते, झगड़ते और घूमते रहे। पूरे मोहल्ले को अपनी फ्री सेवाएँ देना इनका प्रमुख धर्म था। दुकान से सामान लाना, बगीचे से धनिया-नीबू तोड़ लाना, संदेश पहुंचाना, और न जाने क्या-क्या। बड़ों से कुछ ईनामी चवन्नी, एकन्नी भी मिल जाती थी। ईनामी की खुशी ऐसी कि छुपाये न छुपे। मुँह से खुशी की चमक, और जेब से ईनामी की खनक छलक आती थी। सच उगलते हुए तीनों तीर की तरह मानक सेठ की दुकान पहुँच जाते।

समय नहीं रूका। तीनों साथी कक्षा पाँच अच्छे नंबरों से पास हो गए। अब इन मध्यम वर्गीय परिवारों में इनकी बेहतर शिक्षा के लिए, किसी अच्छे व सस्ते स्कूल की तलाश की चिंता थी। अच्छे व सस्ते स्कूल घर के पास नहीं थे। प्रायवेट स्कूल्स की तगड़ी फीस संभव को असंभव में बदल सकती थी। तीनों परिवारों में काफी चिंतन-मनन व विमर्श के बाद 'बाला जी' स्कूल सर्वमान्य ठीक-ठाक समाधान घोषित हुआ। पढ़ाई भी ठीक-ठाक और तीनों का आना जाना भी एक साथ संभव था। छठवीं से नवमीं तक कब हँसते-खीझते दिन निकल गये, पता ही नहीं चला। और अब कक्षा दसवीं, माने बोर्ड परीक्षा। 'बोर्ड परीक्षा' शब्द अपने आप ही में भारी था। परीक्षा के पहले प्रतिज्ञा काफी परेशान सी थी। उसकी आवाज़ भी थोड़ी भारी सी होने लगी थी। कुछ तो असामान्य रहने लगी, और खुद पर आश्चर्य भी करती थी। साथी उसे परेशान भी करते और उल्टे-सीधे व्यंग्य भी। वह स्वयं भी बड़ी चिंतित नजर आती-कहती-मेरे गले में कोई बीमारी तो नहीं है न? मेरी आवाज़ कुछ अजीब सी क्यों हो रही है? फिर वह दूर-दूर रहने लगी। इससे भी बातचीत कम और लगभग बंद ही कर दिया उसने। एक दिन टीचर ने उसे डॉक्टर से सलाह लेने कह दिया। प्रतिज्ञा डॉक्टर से मिली। जांच के बाद उसका चेहरा सूख कर पीला होने लगा। हँसना, शरारत करना, मुँह फुलाना, नखरे करना सब भूल गई जैसे। एक दिन उसका हाथ अपने हाथ में लेते हुए सोफिया ने पूछ ही लिया-क्या हुआ? इतनी अनमनी सी क्यों हो? उसने अपना हाथ इस तरह छुड़ाया, मानों हाथों में कोई रहस्य हो, या तिलस्म हो। मजाक़ के मूड मे उसने भी कह दिया-कहीं कोई मिल तो नहीं गया? प्रतिज्ञा एक झटके में दूर छिटक गई। इस व्यवहार से सोफिया अवाक् रह गई। प्रतिज्ञा भी रूआंसी हो उठी बोली-पता नहीं यार, थोड़ा अजीब सा लगता है और डर भी। सच ये था कि प्रतिज्ञा की आंखों में एक घनीभूत पीड़ा उमड़ आई थी। बात सोफिया के पल्ले नहीं पड़ी।

मार्च-अप्रेल का महीना माने परीक्षा का मौसम। विद्यार्थियों के चेहरों पर थोड़ी गंभीरता दिखाई देने लगीं। फ्री पीरियड्स में भी हाथों में पुस्तक-कापियाँ दिखाई देने लगीं। लड़कों ने लड़कियों पर व्यंग्य करना शुरू कर दिया। 'अरे ये तो इस साल मेरिट मे आएगी' मेरे हिस्से का भी थोड़ा पढ़ लेना, सेकंड पोजिशन

नहीं होना चाहिए। कोई कहता-अरे मेरे से पार्टी ले लेना ग्रैंड पार्टी। लेकिन परीक्षा के दिन आंसर शेयर कर देना प्लीज...वगैरह..वगैरह। इन दिनों प्रतिज्ञा हम लोगों से दूर-दूर और एकांत में रहने लगी थी। साथी आश्चर्य में थे। कई बार तो शिक्षकों के चेहरे पर भी प्रश्नचिह्न उभरने लगते थे।

एक दिन नसरीन ने प्रतिज्ञा का हाथ पकड़ लिया। पूछने लगी 'क्या पढ़ रही है रे जीनियस वन? बातचीत सब बंद?' प्रतिज्ञा ने हाथ छुड़ाया तो नसरीन चिल्लायी 'हाय अल्लाह! इसका हाथ तो देखो, फौलादी है, फौलादी। कौन भला रोक सकता है इसकों? 'मैं रोकूगीं' मौसमी आगे बढ़कर बोली-कैसे ये परीक्षा का भूत है या तू ही आग का गोला हो गई है? नसरीन बोली-'वैसे तो हम लड़के भी नहीं है, जो तू हमसे भागी-भागी फिर रही है।' पता नहीं क्या हुआ प्रतिज्ञा को। वह वहीं सिर पकड़ कर बैठ गई। सारे साथी उसके इस व्यवहार से हैरान थे।

दूसरे दिन प्रतिज्ञा नहीं आई तीसरे दिन भी नहीं। और...और फिर कभी नहीं। परीक्षा को दो दिन शेष थे। सभी उसके बारे में जानना चाहते थे, पर सभी व्यस्त थे। प्राचार्य या शिक्षक से पूछने की हिम्मत किसी में नहीं थी। रघु से नहीं रहा गया तो वह उसके घर चला गया। प्रतिज्ञा के पापा ने कहा-वह बाहर गई है, कल तक आ जाएगी। प्रतिज्ञा की माँ ने कहा-उसकी तबियत ठीक नहीं है। शायद परीक्षा नहीं देगी। इन दो अलग-अलग उत्तरों से सभी हैरान थे। लेकिन प्रतिज्ञा किसी से भी नहीं मिली। सभी संगी-साथी दिखाई देते किंतु प्रतिज्ञा नज़र नहीं आई। प्रतिज्ञा सबकी प्रतीक्षा कर रह गई। नया सत्र शुरू हुआ तो, सबकुछ सामान्य होने पर भी प्रतिज्ञा की गैरमौजूदगी को सभी साथियों के और विशेष कर रघु के चेहरे पर तलाशा जा सकता था।

चार वर्ष बाद सभी साथी बिखर गए। केवल कुछ ही एक दूसरे के संपर्क में थे। एक बार रघु मिला तो सोफिया ने प्रतिज्ञा के बारे में पूछ लिया। रघु बोला-'हाँ एक पत्र आया था। मजे मे हैं-यह बताते हुए वह बेहद प्रसन्न नजर आ रहा था। सोफिया ने भी उसे छेड़ा-मतलब सब सेटमेट है? रघु सकपकाया सा बोला 'नहीं'। ऐसा कुछ, नहीं। मैंने फिर पूछा-प्रतिज्ञा की तरफ से कंफर्म तो है न? रघु हँसकर बोला 'पहले एम.बी.ए. कर लूँ, जॉब ढूँढ लूँ, फिर बताऊंगा।' सोफिया को राहत मिली कि प्रतिज्ञा ठीक है। उनकी दोस्ती को कभी उसने इतनी गम्भीरता से नहीं लिया था। इस बात का सुखद आश्चर्य भी हुआ।

समय सरपट भागता रहा। जो पीछे था, छूटता चला गया। सोफिया भी जमशेदपुर में रहने लगी। उसकी अपनी गृहस्थी थी। एक आध्यात्मिक प्रवचन के दौरान उसकी भेंट एक श्वेत वस्त्र धारी विद्वान पुरूष से हुई, वह रघु जैसा ही था। सोफिया को लगा कि ये तो साफ-साफ रघु ही है। आखिर ये यहां क्या कर रहा है। उससे रहा नहीं गया-उसने अनायास पूछ ही लिया- 'कैसे हो रघु?' रघु ने कोई जवाब नहीं दिया। सोफिया अपमान से तिलमिला उठी। जी में आया-झिंझोड़कर पूछ ले -रघु ये सब क्या नाटक है? और.. और प्रतिज्ञा कहाँ है? पर ऐसा नहीं हुआ उसने मन ही मन रघु को 'कोसा-मूर्ख! भगोड़ा! सच्चाई से भागता है।''

उस दिन सोफिया कोलकत्ता से लौट रही थी। सामने बर्थ पर दो लोग बैठे थे। देखने से ही दोनों 'ट्रांसजेंडर' लग रहे थे। तभी उस बोगी में ऐसे कई ऊँचे-पूरे लड़के-लड़कियाँ नज़र आये। सभी स्मार्ट और एजुकेटेड लग रहे थे। सभी आपस में हिंदी व अग्रेंजी में बातें कर रहे थे। तभी दो लोग और आ गए। एक सामने बर्थ पर और एक सोफिया की बर्थ पर बैंठ गया। सोफिया ने खुद को असहज महसूस किया। सामने बैठी लड़की ने मुस्कुराकर सोफिया को नमस्ते किया। वह बड़ी सहजता से सोफिया से बातें करने लगी। सोफिया ने भी कुछ हल्का महसूस किया। तभी एक दो लोग कुछ अनर्गल हाव-भाव से बातें करने लगे। सामने बैठी लड़की ने उन्हें डांटा, और शांति से अपनी सीट पर बैठने कहा। वे चुपचाप अपनी-अपनी जगह चले गए। थोड़ी देर बाद सोफिया ने ही चुप्पी तोड़ी, और पूछा 'तुम इतने सारे लोग कहाँ जार रहे हो?' उस लड़की ने सोफिया से कहा-मेरा नाम मीरा है, और ये मेरा साथी है 'समीर'। हम लोग एक महासम्मेलन से लौट रहे हैं। अखबार पढ़ते हुए समीर ने चेहरे के सामने से अखबार हटाकर सोफिया को नमस्ते किया, और पुनः अखबार पढ़ने लगा। थोड़ी देर बाद सोफिया ने फिर कहा 'मैंने समझा था किसी कॉलेज या यूनिवर्सिटी का फंक्शन हैं।' मीरा जरा हंसी, फिर बोली-लगभग सभी लोग पढ़े-लिखे ही हैं। मैंने और समीर ने भी दिल्ली यूनिवर्सिटी से एम.बी.ए. किया है। सोफिया चौंक कर बोली-अच्छा! चलो, बहुत अच्छी बात है। लोगों की पूर्व धारणा खत्म होगी। वैसे मेरे भीतर भी आप लोंगों के प्रति कुछ पूर्वाग्रह तो थे ही किंतु अब...सोफिया ने मुस्कुरा दिया। मीरा पुनः बोली-'लेकिन कुछ तो ऐसे भी हैं, जो पुरानी परंपराओं से जुड़े हुए हैं। हम उन सभी को राष्ट्र की मुख्य धारा से जोड़ना चाहते हैं। सोफिया ने कहा-'चुनौतीपूर्ण काम है।' मीरा मुस्कुराते हुए बोली-'हाँ मगर चुनौतियों

को स्वीकारने और संघर्ष करने में ही आनंद है।' बातें होती रहीं और दिन ढल गया। आसमान से तारे ट्रेन की खिड़की से अंदर झांकने लगे। सोफिया ने बात खत्म करने के अदांज से कहा-तुमसे मिलकर अच्छा लगा मीरा, मेरी असहजता दूर हो गई। उसने अपना विजिटिंग कार्ड मीरा को दिया, और बोली आगे भी आपसे बातें हो सकती हैं। सोफिया ने फिर मुस्कुराते हए कहा-हम भी चाहते हैं, समाज में सबको सम्मानपूर्वक जीने का अधिकार मिले। सोफिया अब सोने की तैयारी में थी। समीर ने मीरा से कहा- मैं आगे जा रहा हूँ, थोड़ी देर से सोऊँगा। उसने अखबार मोड़ कर रख दिया। सोफिया ने उसकी ओर देखा तो जी धक् से रह गया-'इसका चेहरा प्रतिज्ञा से मिलाता-जुलता लग रहा है। सोफिया को अपनी आंखों पर विश्वास नहीं हुआ। खुद को समझाया-'ऐसा नहीं हो सकता'-फिर आंखें मूंद लीं। अजीब होती हैं ये आँखें, बंद होने पर भी देखती रहती हैं। उसके सामने अतीत तेज धार नदी की तरह तेज गति से गुज़रने लगा। हड़बड़ाहट में वह उठ बैठी। उसका उद्देश्य समीर को पहचानना ही था। वे लोग दूसरी और गप्पें मार रहे थे। सोफिया बाथरूम गई, लौटी और रूककर समीर को देखने लगी, रहा नहीं गया तो आवाज़ दे दिया-'समीर'। खुद से घबराकर सोफिया बर्थ पर आ गई उसे लगा कि बहुत बड़ी गलती हो गई। क्या कहेगी समीर से....? और अगर वह समीर प्रतिज्ञा न हुआ तो? अगर वह समीर सिर्फ समीर ही हुआ तो? क्या सोचेगा? और भी उस दिन चर्च में मिला पुरूष उसे याद आया। मैंने तो उसे रघु ही समझ लिया था। नहीं-नहीं वह तो रघु ही था। तो क्या प्रतिज्ञा की अनुपस्थिति में रघु को एकान्त जीवन-जीने के लिये विवश कर दिया था सोफिया को खुद पर गुस्सा आ रहा था। विचारों की आंधी ने स्मृतियों की घटाओं से घेर लिया था। रह-रह कर नये विचार कौंधने लगे और निष्कर्ष की एक विचित्र आकृति उसके सामने उभरने लगी। तो क्या-प्रतिज्ञा की कमी ने रघु को एकान्त जीवन की ओर मोड़ दिया। और उसकी चुप्पी....?

कुछ ही पलों में समीर उसके सामने खड़ा था। घबराकर सोफिया ने मुड़ा हुआ अखबार उसके हाथों में दे दिया।

अंततः तीनों मित्रो ने अपनी गलतफहमी दूर की। रघु व सोफिया ने प्रतिज्ञा के साथ मिलकर ट्रांसजेंडर्स के प्रति सामाजिक उपेक्षा व अन्याय के विरूध्द पुनः आपस मे दोस्ती के रिष्ते बनाये। इस तरह जीवन को एक नया व खूबसूरत मोड़ दिया।

समीर वहीं खड़ा रहा और अपलक उसे देखता रहा। सोफिया पसीना पोछने लगी। पल भर बाद बोला -शायद तुमने मुझे पहचान लिया। क्या मैं यहाँ बैठ सकता हूँ? सोफिया घबराहट में खिसक गई। समीर ने बोलना शुरू किया-मुझे सच बताना मना है। पिछला जीवन मेरी खुशियों का ताबूत बनकर हृदय में धंसा जा रहा है। तुम्हारा मिलना मेरे लिए भी सुखद है। जैसे बरसों अंगारों पर चलने के बाद, आज ठंडी छाँव मिली है। हमारी जिंदगी ही ऐसी है कि हम अपना पिछला नाम व जीवन पूरी तरह भुला देते हैं, या भुलाने की कोशिश करते हैं। उसकी आवाज़ दर्द से थरथराने लगी। फिर धीरे से बोला-हाँ सोफिया, मैं प्रतिज्ञा ही हूँ। मेरी ओर एक बार, सिर्फ एक बार सोफिया, वही पहले वाले प्यार और अपनेपन की नजर से देखो बहुत दर्द है दिल में। हम सबकी एक ही कहानी है पर बिना 'उफ' किए पी लिया है -हमने सारा दर्द। सोफिया दुनियाँ और सारी मज़हबें कहती हैं-गलत काम करो तो ईश्वर सज़ा देता है। पर यहाँ तो गलती ईश्वर से हुई है। हम ही उसकी गलती का परिणाम हैं और सज़ा भी हम ही भुगत रहे हैं। सोफिया ने देखा उसकी आँखे दर्द और वितृष्णा से भरी हुई थीं। उसने एक लंबी निःश्वास के साथ चुप्पी साध ली। यह सब इस तरह पलक झपकते हुआ कि सोफिया अवाक् उसकी ओर देखने लगी। जी में आया कि उसे बाहों में भर ले और ज़ोर-ज़ोर से दहाड़ मान कर रो ले। वह अपने कलेजे को सम्हालती हुई सिर्फ इतना ही कह पाई 'कहो समीर, आज सब कुछ सच सच कहो।' समीर ने धीमी आवाज में कहना शुरू किया-परीक्षा तो दसवीं की मैंने भी दी, लेकिन प्रायवेट ही दिया, क्योंकि जो कुछ मेरे साथ हुआ उससे घबराकर मैंने स्कूल जाना ही छोड़ दिया था। फिर माँ मेरी तबियत के कारण कई डॉक्टरों

से मिली। कोई सकारात्मक जवाब नहीं मिला। वे बड़ी त्रासदी व अपमान के दिन थे....तुम्हें कैसे सुनाऊँ? तय हो चुका था कि मैं नपुंसक हूँ-ट्रांसजेंडर। मुझसे अधिक पापा परेशान थे, जो न किसी से कह पा रहे थे, और न चुप रह पा रहे थे। माँ को तो मानो

मानसिक पक्षाघात जैसा हो गया था। अर्ध विक्षिप्त सी रहने लगी। पर मैं... ..मुझे...मैं निर्दोष था, पर हर क्षण से डरने लगा। न मालूम अगले क्षणों में क्या होगा?

एक दिन परेशान पापा ने मुझे ग्वालियर वाले चाचा को सौंप दिया। माँ मुझे छोड़कर जाने के लिए तैय्यार नहीं थीं। मुझे सीने से लगाकर तड़प-तड़प कर रोती रही। माँ बुदबुदाती रही-मेरे किस पाप-कर्म की सजा मेरे बच्चे को मिली? हे भगवान! समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करूँ? मैं पापा से लिपट कर रोता रहा..यह सब क्यों पापा? प्लीज ऐसा मत कीजिए। मुझे अपने साथ ले चलिए पापा। आप जो कहेंगे, मैं वही करूँगा। पापा मुझे साथ ले चलिए, पर पापा मानो पत्थर के हो गए थे।

पापा ने मुझे अलग करते हुए कहा था-तुम्हारा भविष्य अब वहाँ नहीं बन सकता। जो चाचा कहें, वही करना होगा। तुम्हारे लिए हम बेहतर ही करेंगे। मैं किसी से क्या कहता? मेरी इच्छा जानने समझने की किसी ने कोई कोशिश नहीं की। न मुझे कुछ स्पष्ट बताया गया, न समझाया गया। मेरा दोष क्या है? गलती क्या है? मेरे साथ क्या होगा, यह भी नहीं। मैं माँ से लिपट गया था, तो चाची और पिताजी ने मुझे एक झटके से अलग कर दिया, और वे चले गए। मैंने बहुत दर्द अनुभव किया और ऐसा लगा जैसे मैं परिवार का सबसे विकृत और भयावह हिस्सा हूँ। मुझे सबकों छोड़ना ही होगा।

दुनिया का कोई व्यक्ति शायद ही समझ पाये, चाचा जी के घर एक सप्ताह मैंने कैसे गुजारे। अपने आप से घबराहट होती थी, घृणा भी होती थी। जी चाहता था कि चीख-चीख कर रो पड़ूँ-कि मैं प्रतिज्ञा हूँ और कुछ नहीं। मुझे मेरे घर वापस भेज दो। मेरा अपराध क्या है? लगता था दुःख से हृदय फट जाएगा कि मैं 'एबनॉर्मल' क्यों हूँ? ईश्वर, परिवार और समाज. .किसी ने मेरे भीतर दर्द का सैलाब नहीं देखा? धीरे-धीरे में नकारात्मक विचारों से घिरने लगा। कुदरत की गलती, और सजा मुझे? मैंने दो बार पिताजी को भी छुप-छुप कर रोते देखा था, पर किसी ने मेरा दर्द क्यों नहीं समझा? मुझमें उसी दिन से किसी के सामने आने-जाने की हिम्मत खत्म हो गई। मैं अपने आपको अजूबा समझने लगा। सबसे दूर भाग जाने की इच्छा प्रबल हो चुकी थी।

सोफिया की आँखों से आँसू टपकने लगे। उसने धीरे से समीर के कंधे पर हाथ रखा और बोली-मै। तुम्हारा दर्द समझ रही हूँ पर..?

समीर जरा मुस्कुराया, फिर बोला- हाँ सोफिया मैं खुद से और दूसरों से भी परेशान था। मेरे भीतर बहुत दुःख था, क्रोध, नफरत, बेचैनी, चिड़चिड़ापन, पागलपन और उदंडता-और इन सबको झेलने का असह्य दर्द भी। बहुत कुछ कर डालने की इच्छा और कुछ भी न कर पाने की विवशता भी थी। मैं क्या बताऊँ, उन दिनों मेरे भीतर क्या चल रहा था? तुमसे और रघु से बिछड़ना, अपने टुकड़े-टुकड़े कर डालने जैसा था। समीर पल भर चुप रहा। सोफिया धीरे से बोली-अब कहाँ हो समीर?

समीर ने कहा-कुछ दिनों बाद चाचा जी ने मुझे ट्रांसजेंडर्स के एक ग्रुप को सौंप दिया और मैं दिल्ली पहुँच गया। हाँ मुझे ग्रुप लीडर के रूप में मिली-'मीरा'। बेहद समझदार। पहले मैं बहुत असहज था। इन लोगों के साथ खाना, पीना, सोना कुछ भी नहीं कर पा रहा था। मीरा के व्यवहार ने मुझे धीरे-धीरे सामान्य बना दिया। एक दिन मैंने मीरा से सबकुछ कह दिया। तुम्हारे और रघु के बारे में भी। मीरा ने ही धीरे-धीरे समझाया कि पिछला जीवन भूल जाओं और रघु को तो खासकर भूल जाओ। मन-पढ़ने-लिखने में लगाओ। हम सब ही बस एक दूसरे के रिश्तेदार हैं।

लंबा समय बीत गया। समझता था, धीरे-धीरे सब भूल जाऊँगा। तुमसे मिलकर मालूम हुआ, कि वो प्यार, वो दोस्ती सब बरकरार है। क्या तुम मुझे 'प्रतिज्ञा' नहीं समझ सकती? सोफिया ने धीरे से उसको पकड़ा और बोली तुम सिर्फ तुम हो-हम दोस्त हैं और रहेंगे। समीर का चेहरा मुरझा गया। फिर बोला-और वो रघु कैसा है? सोफिया मुस्कुराई बोली-शायद तुम्हें भूल नहीं पाया। अकेला रहता है, एक बार मिला था तो कह रहा था कि तुम्हारा पत्र मिला है।

समीर बोला-हाँ, मैंने यानी प्रतिज्ञा ने उसे एक-एक कर तीन पत्र लिखे। किसी भी पत्र में उसे नाम-पता नहीं दिया। पोस्ट भी कहीं दूसरी जगह से किया था। मीरा के समझाने पर मैंने खुद को बदला। तुममें से भी कभी किसी ने शायद मुझे ढूँढने की कोशिश नहीं की। मेरी आँखे हर दिन, हर दिन किसी अपने को ढूँढती रही, पर सदा ही निष्फल रहीं। मैं एक अनजान और गुमनाम दुनिया में रहने लगा...शायद। भुवनेश्वर स्टेशन आते ही समीर, मीरा और उनके सारे साथी उतरने लगे। सोफिया के दिमाग में बिजली कौंधी। जी चाहा उसे हाथ पकड़कर रोके, पर ऐसा नहीं कर पायी। उसकी पीठ थपथपाकर बोली-अपना फोन नंबर दे दो। उसने अपना विजिटिंग कार्ड दे दिया। उसमें उसक ई-मेल एड्रेस भी था।

सोफिया को अपने शहर लौटे लगभग छः माह हो चुके थे। उसने रघु का पता बमुश्किल ढूँढा। एक रविवार हिम्मत

करके उससे मिलने चली ही गई। मन आशंकाओं से घिरा हुआ था। क्या प्रतिज्ञा के बारें में उससे बाते करना उचित होगा? उसने चौकीदार से रघु का पता पूछा तो चौकीदार ने सोफिया से चिट पर नाम लिख कर देने कहा। थोड़ी ही देर में सोफिया को रघु ने बुलवा लिया। उसने गंभीरतापूर्वक कहा-बात कहाँ से शुरू करूँ? रघु ने बेमन से पूछा-क्या कहना है? सोफिया बरबस बोल पड़ी-प्रतिज्ञा के बारे में क्या जानते हो? रघु ने तपाक् से कहा-मैं अब किसी प्रतिज्ञा को नहीं जानता। सोफिया ने कहा-झूठ बोलने की प्रेक्टिस की है क्या इन दिनों? सच ये है-कि सोफिया हमारी दोस्ती का अभिन्न हिस्सा है। तुम्हें उसे जानना होगा क्योंकि जिन्दगी का तकाज़ा है-हम किसी व्यक्ति को अकारण गलत या स्वार्थी सिद्ध नहीं कर सकते। सिर्फ और सिर्फ इसीलिए मैं तुमसे मिलने आई हूँ यहां तक।

क्या कहना चाहती हो, रघु ने निर्विकार भाव से पूछा। फिर खुद ही बोला-जिन्दगी ने बेवफाई की हद कर दी। लोगों ने प्रेम को मज़ाक और तमाशा बना लिया। सोफिया ने तपाक से कहा-बस यही मैं कहने आई हूँ। जिन्दगी की बेवफाई को व्यक्ति की बेवफाई मत समझो। हम अंधेरे में सच के नाम पर भटक रहे हैं। तीनों के बीच में जो काल्पनिक सच है, उसे दूर करो। हम तीनों अच्छे मित्र हैं। एक-दूसरे के प्रति इतने अनुत्तरदायी कैसे हो सकते हैं? सोफिया ने संक्षेप में उसे अपनी पूरी कहानी सुना दिया। वेंकटेश के चेहरे पर जैसे घने बादल घिर आये थे। आँखों से बरसना भी चाहते थे, पर तपिष इतनी अधिक थी कि चारों ओर सूखा था, भयानक सूखा। सोफिया ने प्रतिज्ञा (समीर) का विज़िटिंग कार्ड रघु के हाथों में रख कर कहा सबकुछ तुम्हारे हाथ में है', मेरी कोशिश खत्म हुई।

वह छब्बीस जून की शाम थी। पहली बार रघु सोफिया से मिलने आया था। साथ में समीर (प्रतिज्ञा) भी था। यह एक अद्भुत समय था सच होते हुये भी चमत्कार की तरह। पिछले दो-चार दिनों से हल्की बूँदाबांदी हो रही थी। वे साथ-साथ बैठकर बगीचे में चाय पी रहे थे और चहक रहे थे। कॉलोनी के सामने फैले सूखे मैदान में थोड़ी-थोड़ी हरियाली फैलने लगी थी। विश्वास है कि जल्द ही वह लहलहा उठेगी और शायद कोई नयी कहानी दौड़ती हुई बाहें फैलाये फिर चली आएगी।

विधाता तेरा यह संसार

-कमला सिंह
पति-श्री विजय पाल सिंह
जन्म-01.07.1963
शिक्षाः स्नातक, सम्प्रति-आँगनबाड़ी कार्यकत्री (प्रथम)
संपर्क- सेमराय, रामनगर, बाराबंकी उत्तर प्रदेश, 225202
मो0: 9453393146

विधाता तेरा यह संसार!
दौड़ रही सड़कों पर मोटर, मोटर में चित्कार!
छल, प्रपंच, मद, लोभ, कपट, के सजते हैं बाजार
झूठ ध्येयता सबल सारथी, सच रहता लाचार
सच के साथी ही करते हैं झूठों का व्यापार!
............विधाता तेरा यह संसार!!
अनगिन स्वप्न लिए आंखों में उर में आह दबाये
राह उसे थी चला रही या वह खुद राह चलाये
क्या मालूम उसे, रख देगा राहों में अंगार!
..............विधाता तेरा यह संसार!!
कितनी रातें, स्वप्न अनूठे, को उत्सर्ग किया
रूप शील गुण प्राज्ञ दक्ष से जग में अर्क किया
किस्मत भी कब साथ निभाई, चली देख मजधार।
..........विधाता तेरा यह संसार!!
ढाये जुल्म, यातनायें दी, कर चीर हरण का खेल
फेंक दिया उस रात अंधेरी, को नाले में ढकेल
स्वप्नों का प्रासाद सलोना पल में छिन्नाकार।
.............विधाता तेरा यह संसार!!
दो दिन आंखों में आँसू ले अनसन तक कर डाले
आये लोग उतर सड़कों पर जड़ रोजी पर ताले
कुछ थे हिंसा को आतुर के हाथों में हथियार।
..........विधाता तेरा यह संसार!!
मौन हो गई चिंगारी जब बुझी हृदय की आशा
कुछ कहते अब लौट चले हो गया खत्म तमाशा
बिसर गई वह यादें, जिनकी जो थी कारोबार।
........विधाता तेरा यह संसार!!
आये दिन कुछ हाथ भेड़ियों के चढ़ जाती है बाला
और वही शामिल, जो कल था, कहता उसका रखवाला
आहें वणिक हुईं आँसू से करने को व्यापार।
.... विधाता तेरा यह संसार!!

कहानी

एक बीज आशा का

स्वस्ति का मन उस मासूम के लिये कराह उठा। उसके स्कूल बैग में लिखे नम्बर पर उसने फोन किया। कुछ ही देर में बच्ची के माता-पिता बदहवास से आये। उन्हें देख कर स्वस्ति हतप्रभ हो गई। अचानक अतीत की खिड़की का दरवाजा जिसे उसने दृढ़ता से बन्द किया हुआ था सामने आई आंधी के थपेड़े से खुल गया।

-अलका प्रमोद

अनु सचिव-उ०प्र०पावर कारपोरेशन लि०, **सम्मानः** सर्जना पुरस्कार हिन्दी संस्थान उत्तर प्रदेश, 'सरिता-अखिल भारतीय कहानी प्रतियोगिता, नारी अस्मिता कहानी प्रतियोगिता में पुरस्कृत, साहित्य सुधारत्न से सम्मानित, अखिल भारतीय हिन्दी सेवा संस्थान इलाहाबाद द्वारा मानद उपाधि आदि।

सम्पर्क-5/41विराम खण्ड, गोमतीनगर, लखनऊ-10, उ.प्र. मोः 9839022552

ईमेल pandeyalka@rediffmail.com,

वह बाजार जा रही थी तभी एक छोटी बच्ची सड़क पार कर रही थी, तभी एक तीव्र गति से आती गाड़ी ने उसे टक्कर मार दी स्वस्ति के देखते-देखते ही बच्ची गिर गयी और गाड़ी उसके पैरों को कुचलती हुयी तेजी से निकल गयी। लोगों की भीड़ जमा हो गयी पर तमाशबीनों की भीड़ में कोई भी बच्ची को उठा नही रहा था। तब स्वस्ति से न रहा गया उसने बच्ची को अपनी गाड़ी में डाला और अस्पताल ले गयी। डाक्टर ने तुरंत उसका प्राथमिक इलाज किया। स्वस्ति ने पूछा ''डाक्टर बच्ची बच जाएगी न?''

डाक्टर ने बताया ''बच्ची की जान तो बच जाएगी, पर उसका पैर बुरी तरह कुचल चुका है, उसे तो काटना ही पड़ेगा''।

स्वस्ति का मन उस मासूम के लिये कराह उठा। उसके स्कूल बैग में लिखे घर के फोन नम्बर पर उसने फोन किया। कुछ ही देर में बच्ची के माता-पिता बदहवास से आये। उन्हें देख कर स्वस्ति हतप्रभ हो गई, कुछ देर को वह संज्ञा शून्य सी हो गई। अचानक अतीत की खिड़की का दरवाजा जिसे उसने दृढ़ता से बन्द किया हुआ था सामने आई आंधी के थपेड़े से खुल गया। कितने स्वर्णिम दिन थे मन मानों हवा के पंखों पर सवार हो और तन कली सा कोमल चांदनी सा उज्जवल, स्फूर्ति से लबालब। पहला दिन था जब वह अपनी मित्र आरूणि के साथ कालेज गई। श्वेत सूट में उसका गुलाबी चेहरा और भी खिल रहा था। किसी ने पीछे से कहा ''चांदनी।''

स्वस्ति के चेहरे पर अनायास ही इस नये नामकरण से मुस्कराहट आ गई । उसने पलट कर कहने वाले के पास जा कर कहा ''मेरा नाम चांदनी नही स्वस्ति है।''

कहने वाला लड़का सकपका गया उसे ऐसी आशा नही थी उसने कहा ''सॉरी मेरा नाम सरल है।''

स्वस्ति और आरूणि दोनों हंसते हुए आगे बढ़ गई।

आरूणि ने कहा ''यार तुम्हारे साथ चलने में मेरा बहुत नुकसान है, मेरी तरफ तो कोई देखता ही नही।''

स्वस्ति ने कहा ''अगर तू कहे तो मैं कल से चेहरा ढक कर चलूं।''

''अरे मैं क्यों उन सबकी बद्दुआए लूं, जिनका सवेरा ही तुझे देख कर होता है।''

आरूणि के कथन में अतिशयोक्ति नही थी एक बार भी जिसकी दृष्टि स्वस्ति पर पड़ती वह उसके सौंदर्य से प्रभाव से मुक्त न हो पाता और पलट कर देखता अवश्य था। धीरे-धीरे उन दोनो का कालेज के सभी छात्र छात्राओं से परिचय हो गया और सरल, चिन्मय, वन्दिका, शौर्य, अन्विता, के साथ उनकी एक अपनी टीम बन गई।

स्वस्ति की झोली मात्र रूप नही, गुणों से भी भरपूर थी। कालेज का कोई भी समारोह हो, स्वस्ति के बिना अधूरा था। चाहे वह संगीत हो, नाटक हो या वाद विवाद प्रतियोगिता। वार्षिक समारोह में ऐतिहासिक नाटक में वह रानी पद्मिनी बनी थी और शलभ अलाउददीन जो दर्पण में उसके सौंदर्य को देख कर अभिभूत हो जाता है। नाटक तो समाप्त हो गया पर शलभ के मन दर्पण में स्वस्ति का रानी वाला जो रूप बसा, तो उसके लाख चाहने पर भी नही मिटा।

उसने स्वस्ति की ओर मित्रता का हाथ बढ़ाया। धीरे धीरे वह चाहे अनचाहे उससे सामीप्य बढ़ाने लगा। क्लास होती तो उसके बगल की सीट पर ही बैठता। यदि किसी दिन कोई दूसरा बैठ जाए तो वह उसे हटा कर ही मानता। प्रायः लड़के उसके दबंग व्यक्तित्व से किनारा करने में ही खैर समझते। फिर तो स्थिति यह हो गयी कि लोग उससे पंगा लेने से बचने के लिये स्वस्ति के बगल की सीट उसके लिये छोड़ ही देते। प्रारम्भ में तो स्वस्ति ने इसे अधिक महत्व न दिया। पर स्वस्ति के कान तब खड़े हुए जब एक दिन शलभ ने उससे कहा ''स्वस्ति मुझे बिल्कुल नही पसंद है कि तुम लड़कों से इतनी दोस्ती करो।''

स्वस्ति ने आश्चर्य से कहा ''तुम्हे पसंद नही मतलब, क्या मुझे तुम्हारी पसंद से चलना होगा?''

''बिल्कुल अगर तुम हमारी हो तो कोई और लड़का तुम्हारे आसपास भी नही फटकना चाहिये।'' शलभ ने स्पष्ट किया। स्वस्ति ने कहा ''मिस्टर शलभ अपनी लिमिट में रहो मैं तुम्हारी प्रापर्टी नही हूं, तुम मेरे लिये क्लास के सभी दोस्तों में से एक हो बस।''

स्वस्ति का सबके सामने उसे नकारना शलभ को बर्दाश्त न हुआ उसने पहले बातों से फिर धमकी से स्वस्ति पर अपना अधिकार जमाने का प्रयास किया। पर प्रभाव विपरीत हुआ। जो स्वस्ति उससे सामान्य व्यवहार करती थी, अब उसकी ओर देखना भी पसंद नही करती। जब शलभ की स्वस्ति को पाने की आशा क्षीण होने लगी तो कुंठित शलभ ने उसे मोबाइल पर व्हाट्स ऐप पर अश्लील संदेश व चित्र भेजने प्रारम्भ कर दिये। परिणाम जो अपेक्षित था वही हुआ, स्वस्ति ने एक दिन कालेज में उसे रोक कर कहा ''शलभ मैने कभी तुम्हे दोस्त बनाया था। फिर मैं तुम्हारे व्यवहार की वजह से नाराज थी, पर अब तुम जो हरकत कर रहे हो उसके बाद मैं तुमसे नफरत करती हूं।''

शलभ के लिये यह खुले आम अपमान उसकी हेठी थी। उसने कहा ''स्वस्ति तुम्हे मेरा यह अपमान बहुत मंहगा पड़ेगा।''

स्वस्ति ने बात को हवा में उड़ा दिया। शलभ का प्रकरण सब भूल गये। कालेज का सत्र समाप्त होते-होते स्वस्ति का विवाह तय हो गया। नितिन अमेरिका में साफ्टवेअर इंजीनियर था। उसकी पूरी मित्र मंडली उसको बधाई दे रही थी। आरूणि ने कहा ''अरे मेरी ब्यूटी क्वीन को तो ऐसा राजकुमार मिलना ही था'।

वन्दिका बोली ''मैं तो उस दिन के इंतजार में मरी जा रही हूं जब यह दुल्हन बनेगी, इतनी सुंदर दुल्हन देख कर कहीं हमारे भावी जीजा जी बेहोश न हो जाएं।''

''अरे ठीक है न मौके का फायदा उठा कर मैं इसे उड़ा ले जाऊंगा।'' सरल ने कहा, सब हो हो कर हंसने लगे। स्वस्ति ने कहा ''अपना मुंह देखा है?''

सरल भी कहां पीछे था बोला ''तुम्हारे विदेशी दूल्हे से अच्छा हूं मेड इन इंडिया।''

उस दिन ऐसे ही हंसी मजाक चलता रहा। सबने स्वस्ति से ट्रीट लेने का वादा ले कर ही उसे जाने दिया।

घर पर भी सभी बहुत प्रसन्न थे। पापा मम्मी तो इतना अच्छा वर मिलने की सोच भी नही सकते थे। वह तो किसी पार्टी में नितिन ने स्वस्ति को देखा तो उसके रूप और व्यवहार पर ऐसा मोहित हुआ कि चट मंगनी चट ब्याह करके ही अमेरिका लौटने का निर्णय ले लिया।

घर का मंगलमय वातावरण और उत्साह छूत की बीमारी के समान स्वस्ति और उसके परिवार से उसके मित्रों और खास रिश्तेदारों में फैलता जा रहा था। सभी अपनी अपनी तैयारी में लगे थे। विवाह से दो दिनो पूर्व स्वस्ति फेशियल कराने यूनिवर्सल पार्लर गयी। प्रसन्नता और फेशियल ने उसके रूप को द्विगुणि कर दिया था। स्वयं अपना चेहरा ही दर्पण में देख कर स्वस्ति निहाल हो गई।

साथ में उसकी भाभी आयी थीं। पार्लर से बाहर निकल कर दोनो ने आटो ली। अभी कुछ दूर ही आगे गयी होगी कि अचानक मुंह पर कपड़ा लपेटे दो लड़कों ने कुछ द्रव स्वस्ति के चेहरे पर फेंका और बाइक से आगे बढ़ गये। स्वस्ति

जलन से तड़पने लगी। भाभी भी घबड़ा गयीं उन्होने आटो रोकी और सहायता के लिये चिल्लाने लगीं। लोग जमा हो गये, कुछ ने सहायता की और अस्पताल ले गये। कुछ ही क्षणों में सब कुछ बदल गया था। स्वप्नों के आकाश में उड़ने वाली स्वस्ति कठोर निष्ठुर धरातल पर आ गिरी थी। उसके बाद जिस तेजी से उसके जीवन में एक के बाद एक काले साये छाते चले गये, उन्होंने उसके जीवन में आशा की किरणों का मार्ग अवरुद्ध कर दिया। स्वस्ति का चेहरा झुलस चुका था साथ ही उसके प्रति नितिन का आकर्षण भी झुलस गया, वह स्वस्ति से मिले बिना ही अमेरिका वापस चला गया। आघात की श्रृंखला यहीं नही रुकी। स्वस्ति के विवाह ने पापा को जितना आह्लादित किया था, उसके टूटने ने उतना ही आघात दिया, जो उनके लिये काल बन गया। हृदय आघात ने उनसे उसकी सांसें छीन लीं। मम्मी तो मानो जीवित हो कर भी विचित्र सी हो गयीं पता नही कहां खोयी बैठी रहती। उन्हें तो यह भी होश नही था कि स्वस्ति क्या क्या हाल है।

सब जानते थे कि यह करतूत शलभ की है। पर था ही कौन जो उसके विरुद्ध आवाज उठाता। मम्मी को होश ही नही था, स्वस्ति अस्पताल में पड़ी थी।

ऐसे में रिश्तेदारों द्वारा पुलिस में लिखाई रिपोर्ट भी शलभ के प्रभावशाली सम्बन्ध ों के दबाव में ठंडे बस्ते में चली गयी। किसी तरह अपने रूप के साथ अपने जले सपनों का बोझ ले कर जब स्वस्ति घर आयी तो निराशा की कालकोठरी में उसे घुटन होने लगी वह गुमसुम हो गई। स्वस्ति की मीमांसा बुआ जो प्रोफेसर थीं किसी सेमिनार में विदेश गयी थीं। अब लौट कर आयीं तो मिलने दौड़ी आयीं। उन्हे घर में निराशा का भयानक अंधेरा दिखा जो निश्चय ही निराशा के गर्त की ओर अग्रसर था। वह समझ गयीं कि इस समय स्वस्ति की जिजीविषा को जगाना जरूरी है। उन्होंने कुछ दिनों तक उसके साथ रुकने का निर्णय लिया। स्वस्ति न किसी से बोलती, न कुछ करती, बस अपने कमरे की लाइट बुझा कर पड़ी रहती। जबरदस्ती खाना खिला दो तो थोड़ा बहुत खा लेती। एक दिन उन्होंने उसके कमरे की खिड़की के पर्दे हटा दिये तो स्वस्ति ने तुरंत उन्हे फिर से फैला दिया। तब बुआ ने कहा ''ये क्या बात है, कब तक अंधेरे में बैठी रहोगी?''

''बुआ अब तो मेरे जीवन में ही अंध ोरा हो गया, यह रोशनी मुझे चुभती है'' स्वस्ति ने कहा।

अपनी लाडली भतीजी का कथन उन्हें अन्दर तक द्रवित कर गया नेत्र भर आये। पर यह समय भावुकता का नही था उन्होंने अपने मनोभावों को छिपाते हुए कहा ''यानि कि तू भी उस पापी शलभ का साथ दे रही है।''

''मैं उस दुष्ट का नाम भी नही सुनना चाहती, आप साथ की बात कर रही हैं बुआ, आपने ऐसा सोचा भी कैसे?'' स्वस्ति ने चौंक कर कहा।

''और क्या सोचूं, वह तुझे बरबाद करना चाहता था और तू स्वयं भी वही कर रही है।''

''मैं कर भी क्या सकती हूं'' स्वस्ति ने निराशा से कहा।

''उसने तो तेरा बाहरी रूप बिगाड़ा है पर अपने आन्तरिक सौंदर्य को तो तू स्वयं ही नष्ट करने पर तुली है न'' बुआ ने कहा।

बुआ की इस बात ने स्वस्ति को सोच का नया दृष्टिकोण दिया। बुआ समझ गयीं कि उनकी बात सही निशाने पर लगी है। उन्होने कहा ''रूप तो वैसे ही कुछ दिनों में ढल जाता है पर तेरे गुण क्षमताएं योग्यताएं तो तभी नष्ट होगी जब तू चाहेगी।''

उस दिन बुआ ने स्वस्ति में जो आत्मविश्वास और आशा का बीज रोपा, उसने स्वस्ति के अंधेरे जीवन में प्रकाश की किरण को राह दी। उस अंधेरे में दीप जलाना सरल न था। पर स्वस्ति को बुआ ने जो आशा की डोर थमायी उसे उसने दृढ़ता से थाम लिया और कभी छूटने न दिया। पहले वह बाहर निकली उसे लोगों की विचित्र दृष्टि का समाना करना पड़ा। लोग उसे ऐसे देखते मानो वह किसी और ग्रह से आयी हो। उसकी पुराने मित्र मंडली भी अब उससे किनारा करने लगी थी।

एक दिन वह जा रही थी तो पड़ोस की गोमती आंटी उसे सुना कर कटाक्ष कर रही थीं ''मेरी बदसूरत बेटियां ही अच्छी, कम से कम यह दिन तो नही देखना पड़े।'' यह वही आंटी थी जो उसके रूपवान और अपनी बेटियों के साध ारण रूप रंग से दुखी रहती थीं।

बात यहीं तक होती तो ठीक था। पर क्रूरता की हद तो उसने उस दिन देखी जब पता चला कि वही वंदना आंटी जो उसे बेटी बेटी कहते नही थकती थीं, कालोनी में कह रही थीं ''असल में लड़की को इतनी तो छूट दे दी। पहले तो उसने रूप के जाल में लड़के को फंसा लिया फिर जब विदेशी अमीर लड़का मिल गया तो उससे मुंह मोड़ लिया। अब लड़के भला यह धोखा कहां सह सकते हैं, ले लिया बदला।''

यह घाव तेजाब के घावों से भी अधिक जलन दे रहे थे, पर स्वस्ति के मन में एक बार जो आत्मविश्वास और आशा का पौधा रोपित हुआ वह अपने स्थान से हिला तो अवश्य पर स्वस्ति ने उसे सूखने न देने का प्रण ले लिया था अतः वह धीरे धीरे ही सही पुष्पित पल्लवित

होता रहा। राह कठिन थी, असंभव नही। उसके आत्मविश्वास ने मम्मी की छूट रही सांसों को भी आक्सीजन दी। स्वस्ति ने घर पर ही ऑनलाइन पढ़ाने का काम प्रारम्भ किया। ऑनलाइन ही उसके कई लड़के और लड़कियां मित्र बन गये। उन्ही में से एक दिन उसका रंजन से भी परिचय हुआ और फिर मित्रता हो गयी। दोनो आनलाइन ही लम्बी-लम्बी चर्चाएं करते विचारों का आदान-प्रदान करते, दोनो के विचार और मानसिक स्तर में अद्भुत साम्यता थी। जब मित्रता प्रगाढ़ हो गयी, तो रंजन मिलने का हठ करने लगा। पर स्वस्ति यह छोटा सा सुख अपना चेहरा दिखा कर खोना नही चाहती थी।

एक दिन द्वार की घंटी बजी, वह बाहर गयी तो आगंतुक ने कहा ''मैं रंजन वर्मा हूं, स्वस्ति कुमार से मिलने आया हूं।''

स्वस्ति समझ गयी आज उसकी इस मित्रता से मिल रहे क्षणिक सुख का भी अंत होने वाला है। उसने मन ही मन निर्णय किया कि अब उसे वास्तविकता के ठोस धरातल पर जीना होगा और इस मृग मरीचिका को यहीं समाप्त करना होगा। उसने सपाट वाणी में कहा ''मुझे दुख है कि आपको बहुत निराशा होगी, मैं ही हूं स्वस्ति।''

रंजन ने कहा ''तो स्वस्ति क्या अपने मित्र को अन्दर आने को भी नही कहोगी?''

स्वस्ति ने चौंक कर कहा ''क्या मेरा चेहरा देखने के बाद अब भी तुम मुझे दोस्त कहना पसंद करोगे?''

रंजन ने कहा ''मैंने तुमसे दोस्ती तुम्हे बिना देखे तुम्हारे विचारों से प्रभावित हो कर की थी तो फिर आज ये चेहरा हमारी दोस्ती के बीच में कहां से आ गया?''

स्वस्ति को अपने कानों पर विश्वास नही हो रहा था क्या कोई ऐसा भी है जो चेहरे से परे उसके आन्तरिक सौन्दर्य से प्रभावित है।

वह चौंक कर वर्तमान में आ गई, जब बच्ची के पिता ने हाथ जोड़ कर स्वस्ति से कहा ''मैडम मेरी बेटी कभी चल नही पाएगी पर आपका बहुत-बहुत आभार। आपकी वजह से कम से कम मेरी बच्ची की जान तो बच गयी।''

स्वस्ति समझ गई कि शलभ उसके झुलसे चेहरे को पहचान नही पाया है। जिस अपराधी को वह दंड नही दे पायी उसे अपने आप ही दंड मिल चुका था। पर जिसे वह दिन-रात कोसती थी आज उसे दंड मिलने पर, वह चाह कर भी खुश नही हो पाई क्योंकि शलभ के दंड में उसकी मासूम बच्ची भी भागीदार होगी, उसे बिना किसी दोश के ये दंड भुगतना पड़ेगा। स्वस्ति को तो बुआ मिल गई थीं, पता नही उस बच्ची में कोई आशा का एक बीज रोप पाएगा या नही?

विवाह

तू सुन और देख
है समस्याएँ तेरी अनेक
अशिक्षा, गरीबी और बेरोजगारी
समस्याएँ ज्वलन्त फैली है सारी
नव किरणें झुलसती है मारी-मारी।
उस पर.....
चुराई नींद माँ की तूने
चुराया चैन पापा का भी तूने
छीना सुख भाई-बहनों का
कसवाया ताना खूब पास-पड़ोस का
आख़िर, तुम्हारा रूप है कैसा?
करूणा स्वर में शापित विवाह बोला
एक रूप है सामाजिक मेरा
वर्चस्व इसका समाज ने हेरा
पर.....
पहाड़-सा दहेज पर टिका
सूखे पत्ते-सा यह भी टूट ही जाता
मर जाता अरमान मेरा
लोग करते बदनाम सारा
मैं हूँ इससे लज्जित होता
मजबूरी में बना रिश्ता
हिमाद्रि को ढो नहीं पाता
भारी पहाड़ से दबा नाता
तमाशा बनकर रह जाता।
रूद्ध कंठ से फिर वह बोला
'दूसरा, प्रेम-विवाह रूप है मेरा
सबको है यह बड़ा प्यारा
पर ....
जालिम समाज दुश्मन मेरा
हेय दृष्टि से मुझे दे मारा
मीठे स्वप्न से भी 'मैं' प्यारा
आखिर, प्रपंच है यह किसका?
क्यों होता है पक्षपात इतना?
लेता नहीं मैं दहेज-वहेज
नयी पीढ़ी है इसकी दीवानी
इश्क जब होता बेईमानी
निकलती तू-तू, मैं-मैं की वाणी।''
इसलिए.....
विवाह!
तू सुन और देख,
है समस्याएँ तेरी अनेक....

-सीमा कुमारी चौधरी
शिक्षा-एम.ए., बी.एड., एम.फिल.
सम्प्रतिः शोधार्थी (इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय), हिन्दी विभाग, खैरागढ़, छत्तीसगढ़, मो.: 9873633319,
E-seemachoudhury@gmail.com

तलाक

-उषा महाजन
जन्म-30.09.1948,
व्यावसाय-लेखक /पत्रकार
संपर्कः 8146, सेक्टर-बी, पाकेट-ग्यारह नेल्सन मंडेला रोड, वसंत कुंज, नई दिल्ली-110070, मो0 9810124679

वे अवाक् सी, बच्ची का मुख निहारने लगीं। यह चिंकी ने ही कहा क्या? अभी तीन साल पहले तक तो यह उनकी बात समझ तक नहीं पाती थी और झट फोन अपनी मम्मी को वापस पकड़ा देती थी। और वे हँसते हुए बेटी को कहने लगती थीं, 'क्या रंजू, तुम लोग घर पर हिंदी बिलकुल नहीं बोलते क्या? और चिंकी तो मेरी अंग्रेजी भी नहीं समझ पाती है। खुद भी एकदम अंग्रेजों वाली एक्सेंट में बोलती है। मैं ही कहाँ समझ पाती हूँ इसकी बातें!'

जवाब में रंजना हँसी नहीं थी, 'माँ, सोचती हूँ कि चिंकी को लेकर वापस दिल्ली लौट आऊँ।'

वे एकदम चौंक गयी थीं। सात समुन्दर पार से आ रही आवाज में भी, उन्हें बेटी की विवशता की गंध सहज ही पहुँच गयी थी।

तो क्या अब भी रंजना और सुकेत के बीच सब कुछ ठीक ठाक नहीं चल रहा था! वहां तो, न ससुराल वालों के सीधे हस्तक्षेप का खतरा था, न ही रोज-रोज के तानों की परेशानी।

'क्या बताऊँ माँ, आपको फोन पर! सब कुछ हो रहा है मेरे साथ, यहाँ भी, जो वहां होता रहा था। दोस्तों, परिचितों के सामने लज्जित करते हैं सुकेत मुझे, कि मुझे खाना तक बनाना नहीं आता, मैं घर बैठे-बैठे मुफ्त का आराम फरमा रही हूँ और नौकरी करने से बच रही हूँ, अकेली छोड़ कई-कई दिनों के लिए घर से गायब रहते हैं। पूछो, तो हाथ भी उठा ...' फूट पड़ी थी रंजू फोन पर ही, 'इन्हें सिर्फ पैसा चाहिए, माँ। आप ही बताइये कि चिंकी को दिन भर 'डे-केयर' में छोड़ कर किसी नौकरी पर निकलूं भी तो कैसे! माँ, मैं वापस दिल्ली लौटना चाहती हूँ। यहाँ रहने से क्या फायदा, माँ!'

वे लेखिका थीं। जिंदगी भर दहेज के खिलाफ लिखती रहीं थी। समझी तो अब थीं कि जब बात अपने परिवार की आती है, तो बड़े-बड़े सिद्धांतवादी भी हार मान जाते हैं, झुक जाते हैं, अपने ही उसूलों के खिलाफ, अपने प्रियजनों की सुख-सुविधा के सामने। तब अपने सारे मान-सम्मान, उसूल-सिद्धांतों को दर किनार कर, वे समझाती रहीं थीं वे बेटी को कि कुछ और वक्त 'एडजस्टमेंट' कर के देख ले। शायद? आखिर यह सिर्फ उसकी ही जिन्दगी का सवाल नहीं था, चिंकी का भी तो सोचना था। बच्चे की सही परवरिश के लिए माँ और पिता-दोनों का होना जरूरी होता है। सलाह यह भी दी थी कि किसी तरह, समझा-बुझाकर, सुकेत को वापस भारत में नौकरी पर आने को मना ले। पता नहीं मन से या बेमन से ही, 'ठीक है, माँ,' कह कर रंजू ने फोन रख दिया था।

निढाल सी हो वे, कुर्सी की पीठ पर सिर टिका, दफन हो चुकी स्मृतियों की गर्त में फिर जा पड़ीं। कितना तो कहा था इस रंजू को शादी से पहले ही कि लोग कुछ ठीक नहीं लग रहे। कभी कह रहे थे कि शादी फाइव स्टार होटल या फिर फार्म हाउस ही में करेंगे, कभी पूछते थे कि गोल्ड-डायमंड वगैरह हम किस ज्वेलर से खरीदते थे। वे हैरान हुयी थीं। उन्होंने तो कभी गोल्ड-डायमंड खरीदने की सोची ही नहीं। खर्च जो किया बच्चों की पढ़ाई-लिखाई पर, उनको सही तरह पालने-पोसने पर ही किया। रंजू को तभी मना किया था कि ये दहेज के लालची लोग थे। उसकी नहीं निभने वाली वहां, पर तब तो यही रंजू सुकेत की तरफ से दलीलें देने लगी थी कि वह कहता था कि बस शादी होने तक ही उसके माता-पिता की शर्तें मान ली जाँय, आगे वह खुद संभाल लेगा। पर सम्भालना क्या था, शादी के बाद तो वह खुद जुड़ गया था, अपने माता-पिता के अभियान में। कभी लग्जरी कार की फरमाइश, तो कभी सारी तनख्वाह लेकर फैमिली पूल में डालने की मांग। और सबसे बढ़ कर तो, अपना मेडेन नाम बदल कर उसका सर नेम अपने नाम के साथ जोड़ने की जिद। राहत की सांस ली थी उन्होंने, जब खबर मिली थी कि कंपनी सुकेत को दो सालों के लिए 'डेप्युटेशन' पर यूरोप भेज रही थी। सोचा, बच्ची के साथ दोनों अकेले रहेंगे बाहर, तो शायद एक दूसरे के करीब आ ही जाएँ.

दो साल क्या, अब तो चार होने को आये। सुकेत ने ब्रुसेल्स पहुंचते ही नौकरी बदल ली थी यूरोप की कंपनी में दो गुने ज्यादा यूरो जो मिल रहे थे। आज कल करते-करते, वापस भारत लौटना टलता ही जा रहा था उनका।

और फिर, उस दिन रंजू का फोन आया तो विश्वास ही नहीं हो रहा था उन्हें, 'माँ, आप घर के पास के किसी अच्छे स्कूल में चिंकी की एडमिशन की कोशिश करिये। सुकेत वापस दिल्ली लौटने को राजी हो गए हैं। कहते हैं कि पहले मैं और चिंकी जाएँ, स्कूल में एडमिशन कराएं, तब वह खुद तीन चार महीने बाद लौटेंगे, अपना बकाया बोनस, इंसेंटिव वगैरह लेकर और दिल्ली के आसपास कोई जहब हाथ में लेकर। अब तो चिंकी और रंजना को उनके साथ रहते तीन-चार महीने क्या, पूरा साल भर होने को आया था, पर सुकेत कुछ भी साफ-साफ नहीं बता रहा था। शुरू में तो हफ्ते में दो-तीन बार उसका फोन आ जाया करता था, तो चिंकी भी चहक कर पूछा करती थी कि पापा कब आ रहे थे। फिर हफ्ते में एक ही बार फोन करने लगा था वह! और वह भी सिर्फ चिंकी से बात करने के लिए ही। फिर तो देखा दो-दो हफ्ते इंतजार करने के बाद, रंजना ही फोन लगाती थी उसको और रोना-धोना, शिकवे-शिकायतें, बंद दरवाजों के पार भी उनके कानों में पड़ ही जाते। अभी छह सालों की भी तो नहीं हुयी थी चिंकी। वे काँप उठीं थीं, जब उसको फोन पर अपने पापा को कहते सुना, 'यू केयर मोर फार यूरोज, नाट फार अस। हमारी परवाह कहाँ है आपको? आपको तो बस यूरो ही चाहिए। 'शायद माँ से सुने शब्दों को ही दोहरा रही होगी।

पर, शायद नहीं भी। वे देख रहीं थी कि इस एक साल में चिंकी कितनी बड़ी हो गयी थी, कितनी मैच्योर हो गयी थी। आई थी, तब हिंदी का एक शब्द भी नहीं समझती थी। ड्राइंग रूम में सजे ताज महल को मंदिर समझ, 'ओम जै जगदीश हरे' कहने लगती, जैसा कि वहां सीखा था, प्रवास के दौरान। उन्होंने ही तब समझाया था उसे, ताज महल और मंदिर का फर्क। वे खुद कभी पूजा पाठ नहीं करतीं थीं, पर बच्ची को श्रद्धा थी, तो क्यों रोकतीं! चलो इसी में इसका मन रमा रहे। रसोई घर से लगे छोटे कमरे में, लकड़ी का बना बनाया एक छोटा सा मंदिर भी स्थापित कर दिया था उन्होंने, सभी देवी देवताओं की मूर्तियों सहित। चिंकी जिद करती, तो उसके साथ 'ओम जै जगदीश हरे' की पूरी आरती भी वे गातीं। आरती, प्रसाद के आयोजनों सहित। प्रसाद चाहे चीनी का होता या मिठाई का, आरती के उपरांत, सबको टीका लगाने के बाद चिंकी खुद ही बांटती प्रसाद।

उस दिन तो जैसे गाज ही गिरी थी सब पर। पहली बार कोई कोर्ट से आया था उनके घर। तीस हजारी कोर्ट से। काँपते हाथों से रंजना ने कागजों की तहें खोली थी। तलाक का नोटिस था, सुकेत की ओर से। तीस दिनों के भीतर अदालत में जवाब देना था। रंजू पर 'परित्याग का आरोप लगा कर माँगा था, सुकेत ने उससे तलाक। रंजना को तो जैसे काठ ही मार गया था। तो उनको कोर्ट-कचहरी में जाकर लड़ना था अब! इस डेढ़ साल की कानूनी लड़ाई के दौरान, जो जाना, जो अनुभव हुए, वे तो जिन्दगी के इतने सालों, दुनिया भर के लेख, कहानियाँ लिखते, हर तबके के लोगों के साक्षात्कार लेते भी, कहाँ जुटा पायीं थी वे!

उन्हें टूटना नहीं था। वे टूट नहीं सकती थीं। इस विलासिता के लिए वक्त नहीं था उनके पास। उन्हें तो बचाना था रंजना और चिंकी को टूटने से। सँभालना था, उन दोनों को। इन डेढ़ सालों के दौरान जाना था उन्होंने कि एक बच्चे की माँ के लिए 'डाइवोर्स' शब्द कितना डरावना होता है, कि एक पढ़ी लिखी, आर्थिक रूप से सक्षम औरत भी, कहती चाहे जो रहे, इस परिस्थिति से बचने की ही कोशिश करती है। और खुद बच्चे पर क्या गुजरती है!

उन्होंने देखा था चिंकी को। इतनी बड़ी भी नहीं थी कि सब कुछ समझ पाती ठीक से। पर, छोटा सा तो घर था। सब कुछ सुनती तो थी। माँ और नानी के बीच की बातें। कभी वकीलों से मिलने की, कभी अदालतों की सुनवाइयों की। सुकेत की हृदयहीनता की। उसकी दगाबाजी की। वे चौंक उठी थीं, जब एक दिन उन्हें सहलाते हुए बोली चिंकी, 'नानी, आप एक बार फोन लगा दो पापा को। मैं उनसे पूछूंगी, तो वे...' उसने जमीन पर गिर कर लोटने का अभिनय किया, 'पापा लव्स मी, नानी। वे मुझे बहुत प्यार करते हैं। पापा मेरी बात नहीं टालेंगे। ही विल कम रनिंग। वे इंडिया जरूर आयेंगें।'

वे कैसे समझतीं चिंकी को कि अगर उसके पापा को उसके लिए दौड़ कर ही आना होता, तो वह चालाकी से माँ -बेटी से पीछा ही क्यों छुड़ाता? उन्हें यहाँ भेज कर?

उनके वश में तो इतना ही था कि इन दोनों को, रंजना और चिंकी को, इस आघात से पहुंची चोट से, जितनी जल्दी हो पाये, उबार सकें। खुद नास्तिक होते हुए भी, वे चिंकी के कहने भर से अपना कामकाज छोड़, उसके साथ, उसके मंदिर में आ बैठतीं। धूप-अगरबत्ती जलाने में उसकी मदद करतीं। मिश्री-चीनी का प्रसाद तश्तरी में निकाल, उसे पकड़ातीं और समवेत स्वर में तीनों जन 'ओम जय जगदीश हरे' की आरती गातीं। आरती के बाद चिंकी ने नियम ही बना लिया था कि प्रसाद वही बांटेगी सभी को। फिर कहती कि प्रसाद खाने के पहले सब लोग प्रसाद वाली मुट्ठी बंद कर के, अपनी अपनी 'विश' मांगेगें गाड से, भगवानजी से। फिर पूछती कि किसने क्या 'विश' की। वे खुद और रंजना तो अक्सर यही कहतीं कि उन्होंने 'विश' की थी कि चिंकी खूब अच्छी तरह पढाई करे, जिन्दगी में आगे चल कर खूब नाम कमाए, बड़ी डांसर बने, सिंगर बने, पेंटर या राइटर बने, वगैरह-वगैरह। और चिंकी बड़ी मासूमियत से हमेशा अपनी एक ही 'विश' बताई, हर बार। देवताओं की मूर्तियों के सामने हाथ जोड़, आँखें बंद कर बोलती, 'मैंने तो विश की है कि मेरे पापा लौट आएं हमारे पास, यहां दिल्ली में।'

वे और रंजू-दोनों ही असहज हो जाती। पर कुछ कह कर बच्ची की भावनाओं को आहत भी तो नहीं किया जा सकता था। और फिर पता नहीं, कोर्ट में भी मामला अभी क्या मोड़ ले। चिंकी के लिए तो रंजना अब ही माफ कर सकती थी सुकेत को, अगर वह

बहरहाल, वह दिन भी आ ही पहुंचा था। रिश्तेदारों ने ही नहीं, खुद जज साहब ने भी सलाह दी थी रंजना को कि जब वह भारत लौटना ही नहीं चाहता था, और उसके साथ रहना ही नहीं चाहता था, तो मामले को लम्बा खींचने से कोई फायदा नहीं था। वह अभी युवा थी, उसे भी अपनी नयी जिन्दगी शुरू करनी चाहिए। बेहतर यही था कि दोनों आपसी सहमति से तलाक के लिए राजी हो जाएँ।

धुंधलाई आँखों से उन्होंने देखा था कि कांपते हाथ से तलाकनामे पर दस्तखत करते हुए, रंजना की आँखे टपक पड़ी थीं।

सुनने-बोलने में कितना सपाट था यह शब्द! पर कितना व्यापक था इसका फलक! कितनी जिन्दगियों का रास्ता मोड़ने वाला। घर से बेघर करने वाला। क्या इतना ही आसान होता है, औरत के लिए नयी जिन्दगी शुरू कर लेना! बच्चे के साथ! और क्या आसान होता है बच्चे को समझाना, इसका मतलब कि उसके माँ-बाप के बीच रिश्ते अब कैसे बदल गए हैं कि दोनों ने मिल कर जो उसकी रचना की थी, अपनी उस रचना को देखने का उनका नजरिया अब कितना बदल गया है। खैर, देर -सवेर तो बताना ही था चिंकी को। और इस तरह, कि कम से कम चोट लगे उसको। किसी तरह ही घुमा -फिर कर समझाया था उन्होंने बच्ची को, कि अब वह पापा के लौट आने की दुआ न माँगा करे। उसके पापा तो बहुत दूर विदेश में रहते थे न। और वे यहाँ आना नहीं चाहते थे। अब उसे और उसकी मम्मी को उनके साथ ही रहना था, यहीं दिल्ली में। उसे अपनी पढाई पर ध्यान देना था और अपनी मम्मी को और खुद को हमेशा खुश रखना था। अच्छे अच्छे काम करने थे। नयी-नयी चीजें सीखनी थीं।

चिंकी हतप्रभ सी उन्हें देखने लगी थी। पर बोली कुछ भी नहीं। न पूछा ही कुछ। एकदम सुस्त सी हो गयी थी बच्ची, उसके बाद से। न ठीक से खा पी रही थी, न किसी से बोलना-बतियाना।

उन्हें अपराध बोध सा महसूस हुआ। शायद उन्होंने जल्दबाजी की थी। अभी बहुत छोटी थी चिंकी। उन्हें अभी नहीं बताना चाहिए था बच्चे को इतनी निर्मम सच्चाई। करती थी वही 'विश', तो करती रहती। समय आने पर खुद ही समझ जाती।

वे तरह-तरह से चिंकी का दिल बहलाने की कोशिशें करने लगी थी। उसका मूड बदलने को कहानी किस्से सुनाने लगी थीं। पर चिंकी थी कि पत्थर की पत्थर। न उनकी किसी बात का जवाब देती, न उनकी तरफ आँख उठा कर भी देखती।

उन्होंने उसका मन फेरने की आखिरी कोशिश की। चिंकी का मूड बदलने का एक ही तरीका सूझ रहा था उन्हें। उन्होंने आरती की थाली सजाई, तश्तरी में मखाने और मिश्री का प्रसाद रखा और अगरबत्तियां जलाईं। चिंकी की मनपसंद पीतल की नन्हीं घंटी बजाते हुए, वे उसके पास पहुंची, 'चल बच्चे, भगवान जी की आरती कर लें। चल, ओम जय जगदीश हरे, कर लें....

'नहीं', चिंकी एकदम चिल्लाई, 'नहीं वह कुछ नहीं कर सकते। भगवान जी कुछ नहीं दे सकते किसी को'

प्रसाद और अगरबत्तियों वाली थाली उनके हाथों से छूटते-छूटते बची। वे अवाक् सी चिंकी का मुख देखने लगीं। यह चिंकी ने ही कहा क्या? इस नन्ही सी छह साल की बच्ची ने?

बैसाखियाँ

उसने सोच लिया है कि अब वह खाली नहीं बैठेगी ... कुछ करना ही होगा. न घर में अधिक रहेगी और कोई वार्तालाप सुनेगी. न कुछ सुनेगी और न मन ही मन घुटेगी. अब और ज्यादा दिन घर में रही तो निश्चय ही वह मानसिक रोगी बन जायेगी.

-पवित्रा अग्रवाल
जन्म—17.05.1952, शिक्षा-एम.ए, बी.एड.
सम्पर्क- घरौंदा, 4—7—126, इसामियां बाजार, हैदराबाद-500027, तेलंगाना
मो०- 09393385447
ईमेल-agarwalpavitra78@gmail.com

आजकल मणि बहुत परेशान रहने लगी है. घर की छोटी-छोटी बातें उसे आहत कर जाती हैं. रात को ठीक से सो नहीं पाती. अक्सर उसे नींद की गोली खानी पड़ती है. उसने महसूस किया है कि दिन पर दिन वह असहिष्णु होती जा रही है. पास-पडौसी, रिश्तेदार यानि घर में आने वाला हर व्यक्ति उसके पुनर्विवाह के लिए रिश्ता जरुर सुझा जाता है. कोई उससे दुगनी उम्र का है, तो कोई दो तीन बच्चों का बाप है. कोई कम पढ़ा लिखा है तो कोई धनी पर शारीरिक रूप से अपंग है.इन शुभ चितकों की नजर में नारी जीवन की सार्थकता सिर्फ विवाह में है .. उसकी हर समस्या का हल शादी है. जैसे शादी ही उसके जीवन की मंजिल है.

यह सब बातें उसे अव्यवस्थित कर जाती हैं. उसने सोच लिया है कि अब वह खाली नहीं बैठेगी ...कुछ करना ही होगा. न घर में अधिक रहेगी, न घर में चल रहा कोई वार्तालाप सुनेगी. न कुछ सुनेगी और न मन ही मन घुटेगी. अब और ज्यादा दिन घर में रही तो निश्चय ही वह मानसिक रोगी बन जायेगी. जमाना कहाँ से कहाँ पहुँच गया पर कुछ मामलों में मम्मी पापा अभी भी वहीं अटके हैं. उसके पुनर्विवाह की बात तो सोच रहे हैं पर उसे आत्म निर्भर बनाने की बात अभी भी उनकी समझ में नहीं आती. यों ये माता पिता का प्यार ही है जो उसे नौकरी नहीं करने देना चाहते. लेकिन वह नहीं समझ पा रहे कि यही प्यार एक दिन उनकी प्यारी बेटी के लिए अभिशाप भी बन सकता है. जीवन भर तो माँ बाप का साया उस पर नहीं रहेगा. उन्हें लोगों के कहने की फिक्र है ...वह सोचते हैं कि बेटी के नौकरी करने पर सब उन्हें ताने देंगे कि बड़े अधिकार से विधवा बेटी को ससुराल से ले तो आये पर उसे सहारा नहीं दे सके, उससे नौकरी करा रहे हैं.

यह सहारा शब्द उसे कहीं अन्दर तक छील जाता है. पापा की अनिच्छा के बावजूद वह पिछले कुछ दिनों से समाचार पत्रों में वान्ट्स के कालम देख कर आवेदन पत्र भेजने लगी है. आखिर वह एम.ए. है. शिक्षा इसलिए भी होती है कि व्यक्ति आत्म निर्भर बना सके. क्षमताएं होते हुए भी वह अभी तक माँ बाप की आश्रिता बनी रही. गलती उसकी भी है. उस में दृढ इच्छा शक्ति का अभाव रहा वरना माता पिता को समझाना मुश्किल नहीं था. अब धीरे -धीरे समझा बुझा कर उसने माँ को अपने पक्ष में कर लिया है. समय आने पर वह पापा को भी समझा लेंगी. उसने निश्चय कर लिया है कि नौकरी के लिए उसे घर से दूर भी जाना पड़ा तो वह जरूर जायेगी.

पापा माँ से कह रहे थे 'महेंद्र का पत्र आया है, उसकी पत्नी गर्भवती है. डाक्टर ने उसे अधिक काम करने को मना किया है, कामवाली ढंग की मिलती नहीं है, मणि को भेजने को लिखा है. उसने मणि के लिए एक रिश्ता भी सुझाया है. उसके दोस्त का भाई है. एक वर्ष पूर्व उसकी पत्नी की मौत हो गई थी. उसके दो बच्चे हैं, लड़का चार और लड़की दो वर्ष की है. उसका अपना मकान है, सरकारी नौकरी में है. विधवा से शादी करने को तैयार है और कोई मांग भी नहीं है.

माँ भड़क उठी थीं. दो बच्चों के बाप से मुझे मणि की शादी नहीं करनी, बच्चे न होते तो विचार किया जा सकता था. महेंद्र को मैं अच्छी तरह जानती हूँ, उसे यह रिश्ता इसीलिए पसंद आया है कि वहां कुछ खर्च नहीं करना पड़ेगा.'

...उसकी नजर बहुत दिनों से मणि के पचास हजार रुपयों पर है. मणि से

कई बार कह चुका है कि बैंक से वह रुपये निकल कर मुझे देदे, ब्याज पर चढ़ा दूंगा तो रुपये बहुत जल्दी दुगने हो जायेंगे. मणि ने यह कह कर टाल दिया कि इसका निर्णय पापा करेंगे, उन्ही से बात करिए'... आप से बात करने की उसमें हिम्मत नहीं है. क्योंकि मणि की शादी से पहले भी उसके लिए रखे रुपयों में से आप से दस हजार रुपये यह कह कर ले गया था कि शादी से पहले दुगने दे दूंगा...पर मूल रकम भी वापस नहीं की थी.

'हाँ अच्छी तरह याद है...मांगने पर कहा था जिसे उधार दिए थे उसकी मौत हो गई, कोई लिखा पढ़ी नहीं थी इसलिए मारे गए।'

'कुछ भी कहो मणि के ससुराल वाले थे बहुत अच्छे. शादी में उन्होंने कुछ माँगा नहीं और आपने कुछ दिया नहीं'

मणि को याद आया कि पापा ने उसके ससुर से कहा था कि हम कपड़ों और गहनों के सिवाय बेटी को अभी घर गृहस्थी का कोई सामान नहीं दे रहे हैं. शादी के समय ३० हजार रुपये दे देंगे ताकि पोस्टिंग की जगह जाकर जरुरत का सामान खरीद ले... शादी के समय भी वह तीस हजार उन्हें नहीं दिए गए. भाई ने बहाना बना दिया कि बैंक बंद होने की वजह से रुपये नहीं निकाल पाया. मणि जब दुबारा जाएगी तो ड्राफ्ट उसे दे दूंगा' कहने को तो तब ससुर जी कह सकते थे कि शादी की तारीख तो तीन महीने पहले से तय थी ...बैंक के बंद होने का भी पता था. रुपये पहले से निकाल कर रखने चाहिए थे. पर ससुर जी की शराफत थी कि उन्हों ने कुछ भी नहीं कहा था. लेकिन वह जानती थी कि सामान इसलिए नहीं दिया गया कि ननद भी शादी के लायक है कहीं वह सामान उसके लिए न रख लिया जाए. विदा के समय मन ही मन डरी हुई थी कि पता नहीं ससुराल में उसे क्या क्या सुनना पड़ेगा. क्योंकि भाई ने उसके पहुँचने से पूर्व ही कटुता के बीज बो दिए थे लेकिन ससुराल में किसी ने भी मेरा मन दुखाने वाली कोई बात नहीं की थी, ससुर जी और नरीश ने भी नहीं. और फिर दुबारा विदा होने का मौका ही नहीं आया था. ससुराल में पंद्रह दिन पलक झपकते ही बीत गए थे, और भाई विदा कराने आगये थे. उसके लौटते समय नरेश उदास थे. उसके स्वयं के नेत्राकाश में भी बादल घिर आये थे. वह सोचती रही थी कि पंद्रह दिनों के परिचय में इतनी निकटता व आत्मीयता कि कुछ दिन का बिछोह भी व्यथा का कारण बनने लगे ...यह कैसा रिश्ता है?...कैसी आसक्ति है?.. .दोनों ही चुप थे, शब्दों में अपने भावों को प्रगट करने में अक्षम थे. तभी उन्हों ने पूंछा था –'हमारी याद तो आएगी न...भूल तो नहीं जाओगी?'

उसने भी छेड़ा था 'किसी को याद करने की बीमारी हम नहीं पालते 'नरेश ने उसे बांहों में भर लिया था।'

'पत्रोत्तर तो दोगी या पहले की तरह हम प्रतीक्षा करते रहें और तुम कोई उचित संबोधन की तलाश में पत्र ही न लिख पाओ।'

ऐसा ही तो हुआ था...सगाई के बाद नरीश का पत्र आया था. घर में सब पूँछते रहे थे कि किसका पत्र है पर शर्म से वह झूठ बोल गई थी कि सहेली का पत्र है. नरीश को पत्र में लिखने के लिए किसी उपयुक्त समोधन की तलाश करते करते ही शादी का दिन आ गया था. बाहर से आवाजें आ रही थीं कि बहू अभी तक तैयार नहीं हुई क्या गाड़ी छूट जायेगी।' पर नरीश थे कि छोड़ ही नहीं रहे थे. वह जबरन हाथ छुड़ा कर बाहर निकल आई थी. उसे क्या मालुम था कि नरीश से यह उसकी आखिरी मुलाकात है.

उसे माँ के घर आये पंद्रह दिन ही हुए थे. इस बीच दो बार नरीश का फोन आ चुका था. तीन चार दिन बाद वह लेने आने वाले थे...तभी फोन की घंटी बज उठी थी. फोन उसी ने उठाया था. उधर से किसी की घबराई हुई आवाज थी 'मैं सहारनपुर से बोल रहा हूँ, नरीश का एक्सीडेंट हो गया है... हालत गंभीर है.'

उसके हाथ से रिसीवर छूट गया था 'किसका फोन है मणि है...क्या हुआ? कहते हुए पापा ने फोन उठाया था. तभी टेक्सी करके वह लोग सहारनपुर पहुंचे थे, घर में रोना-पीटना मचा था, फिर उसे कुछ पता नहीं कि क्या हुआ, वह बेहोश हो कर गिर गई थी. सर में काफी चोट आई थी. अस्पताल में जब उसे होश आया तो डाक्टर, पापा, माँ उसके पास थे. उसने जानना चाह था कि नरीश कैसे है? पर सब की आँखों में उमड़ते आंसू उसके प्रश्नों का उत्तर दे गए थे. अंतिम समय वह नरीश को नहीं देख पाई थी, क्रूर काल उसके सुख को बंदी बना कर ले जा चुका था. नरीश के साथ बिताये पंद्रह दिन उसकी याद बन कर रह गए थे. तेरहवीं के बाद लोगों के मना करने पर भी पापा व भाई उसे अपने साथ ले आए थे.

काफी भाग दौड़ के बाद नरीश का पचास हजार का बीमा उसे मिला था. उन रुपयों में से शायद कुछ रुपये ससुर जी ने भी मांगे थे, इसी बात पर भाई से उनकी खट-पट हो गई थी. घर आकर भाई बहुत बौखलाए थे-'जवान बेटा मर कर चुका है और नीयत

उसके पैसे पर टिकी है. मेरी बहन का तो सारा जीवन पड़ा है, उसकी चिंता नहीं है. कहते है बहू को यहीं रहने दो ...लालची हैं, पैसे के लालच में रोकने को कह रहे हैं ताकि कुछ उन्हें भी मिल जाए।' इस तरह उसके ससुराल से संबंध तभी समाप्त हो गए थे.

माँ के मणि पुकारने पर उसका ध्यान भंग हुआ. माँ ने एक पत्र उसे देते हुए कहा-बेटा आज तेरे भाई का भी पत्र आया है, तुझे वहाँ बुलाया है।'

'मैंने सब सुन लिया है माँ. तीन साल में कभी एक बार भी बहन की याद नहीं आई, अब मतलब है तो बुलाया है..मुफ्त की नौकरानी चाहिए न. एक बार जाकर देख चुकी हूँ. तुम्हे याद है न माँ भाभी के तानों से परेशान होकर मैं ने एक बार उन्हें जवाब दे दिया था तो भाई किस तरह मुझे मारने को दौड़े थे...अब तो मैं ने वैसे भी कई जगह नौकरी के लिए आवेदन पत्र भेजे हुए हैं. अब मेरा यहाँ रहना जरुरी है।'

'यह चिट्ठी तो देख किसकी है?'

'अरे यह तो साक्षात्कार के लिए पत्र है, अपने यहाँ के गर्ल्स इंटर कालेज से आया है...पांच दिन बाद साक्षात्कार के लिए जाना है माँ।' साक्षात्कार के बाद लौटने के लिए वह सड़क पर रिक्शे के इंतजार में खड़ी थी कि उसकी नजर एक वृद्ध पुरुष पर पड़ी, उन्हें देख कर वह चौंक गई. वह नरीश के बाबू जी यानि कि उसके ससुर जी थे. तेज कदमों से चल कर उसने पीछे से आवाज दी 'बाबू जी' उनके बढ़ते कदम तनिक रुके. पीछे मुड़ कर प्रश्नसूचक नजरों से उसे देखा लेकिन पहचान का कोई संकेत दिए बिना वह आगे बढ़ गए. हो सकता है कि वह पहचाने न हो. वह आगे बढ़ कर उनके सामने खड़ी हो गई- 'बाबूजी मैं मणि हूँ और झुक कर उनके पैर छू लिए. उनके जूते गंदे व फटे हुए थे, जो उनके हालत प्रगट कर रहे थे. नरीश के बाबू जी इस हाल में?...उसके अन्दर कहीं कुछ चटका था. उनके हाथ आशीष की मुद्रा में ऊपर उठे पर वह कुछ बोले नहीं. उदासीनता का भाव लिए उसे देखते रहे. उनके चेहरे कि झुर्रियां और सघन हो आई थीं.

'बाबूजी आप यहाँ कैसे?....कब आये?'

'आज ही आया था।'

'अरे यह तो साक्षात्कार के लिए पत्र है, अपने यहाँ के गर्ल्स इंटर कालेज से आया है.' साक्षात्कार के बाद लौटने के लिए वह सड़क पर रिक्शे के इंतजार में खड़ी थी कि उसकी नजर एक वृद्ध पुरुष पर पड़ी, उन्हें देख कर वह चौंक गई. वह नरीश के बाबू जी यानि कि उसके ससुर जी थे.

'कुछ काम था?'

'हाँ नीना के लिए लड़का देखने आया था।'

उसे प्यारी सी नीना का स्मरण हो आया. बहुत हंसमुख और चंचल थी वह. मेरी इकलौती भाभी कह कर उस से बच्चों की तरह चिपक जाती थी. कुछ बात बनी बाबू जी ...लड़का क्या करता है?'

उत्तर में वह चुप रहे, उनके चेहरे पर अनेक भाव आ जा रहे थे. लगता था वह स्वयं से युद्ध कर रहे हैं.

उसने पुनः पूछा-'बाबू जी लड़का कैसा है?'

'अब क्या बताऊँ...अपनी दुकान है कपड़े की और सब तो ठीक है पर उसकी एक शादी पहले भी हो चुकी है ...दो बच्चे भी हैं...पत्नी से तलाक हो चुका है।'

सुन कर उसे झटका सा लगता है. नरीश की सुन्दर, सुशील, पढ़ी लिखी बहन की शादी ऐसे आदमी से? क्या नरीश के होते ऐसे विवाह की कल्पना भी की जा सकती थी.

'उसके दिमाग भी आसमान में हैं।'

'क्या हुआ बाबू जी'

'होना क्या है बीस हजार नकद मांग रहे हैं, बाकी सब खर्चा अलग से. मैं ने तो इंजीनियर बेटे की शादी में भी कुछ नहीं माँगा था...कहाँ से दूं? मेरा तो सब कुछ लुट चुका है.जो कुछ पास में था वह एक बेटी की शादी और नरीश की पढाई में लगा दिया. घर में जो गहने थे वह नरीश की शादी में चढ़ा दिए थे. सोचा था धीरे-धीरे नरीश सब सम्हाल लेगा किन्तु वह तो हमें बर्बाद कर गया...बीच में ही धोखा देकर चला गया 'उनके झर-झर आंसू बहने लगे थे जिसे वह धोती से बने मैले रुमाल से पोंछते जा रहे थे.

उसकी आँख भी भर आई थीं 'बाबू जी आप घर चलिए, वहां बैठ कर बात करेंगे.

'क्या बातें करनी हैं अब...सब व्यर्थ है. मेरी गाड़ी जाने का समय हो रहा है, अब मैं चलूँगा. मैं तो हर तरफ से लूटा गया हूँ ...दिवालिया हो चुका हूँ, अब किसे दोष दूं...सब नियति का खेल है.' देखते ही देखते वह लंबे लंबे डग भरते चल दिए थे और वह सड़क पर खड़ी उन्हें जाते देखती रह गई थी. उसका मन तेजी से रोने को हो आया. निरंतर बहते आंसुओं से पथ धुन्धला

गया. सप्रयास स्वंय पर नियंत्रण करती वह दूर खड़े रिक्शे पर जाकर बैठ गई और घर लौट आई. उसके कानों में तेज बर्छी से वही शब्द चोट करते रहे ‘वह मुझे बरबाद कर गया, दिवालिया बना गया...मैं तो हर तरफ से लूटा गया हूँ ‘उसे लगता है वह चिल्ला कर उस से भी कह रहे हैं कि मुझे तुमने भी लूटा है, तुम्हारे घर वालों ने भी लूटा है.

अब उसे भी लगने लगा है कि अनजाने में वह भी कहीं बाबू जी की अपराधिन है. नरीश के यहाँ से शादी में आये गहने उसे अपने पास नहीं रखने चाहिए थे. नरीश जिंदगी भर बाबू जी से लेते ही रहे पर जब उनके लिए, परिवार के लिए कुछ करने का समय आया तो वह दुनियां छोड़ गए.वह ऋणी हो कर गए हैं, पति का कुछ ऋण तो उसे भी चुकाना चाहिए था.

‘कैसी बहकी-बहकी बातें कर रही है? रूपयों पर कानूनन तेरा हक है तभी तो तुझे सोंपे गए हैं...रुपये उनको कैसे दे सकते हैं?’

‘पापा नरीश से मेरा कितने दिनों का परिचय था?...सिर्फ पंद्रह बीस दिनों का, किन्तु बाबूजी ने उन्हें पढ़ाया लिखाया. ..पाल पोस कर अनेकों तकलीफ सह कर इतना बड़ा किया. आज उनके पास क्या है..सिर्फ कर्ज का बोझ?..

तभी दूसरा भाव जन्म लेता है...नहीं उसने कोई अपराध नहीं किया है... उसका भी तो सारा जीवन पड़ा है. पति की सम्पत्ति पर पत्नी का ही अधिकार होता है...नरीश की मृत्यु का कारण वह तो नहीं है. यदि उनका बेटा गया है तो उसका भी तो पति गया है. सब कुछ उन्हें दे देगी तो उसका क्या होगा. पिता भी कोई साधन संपन्न व्यक्ति नहीं हैं, क्या सारे जीवन पिता पर बोझ बनी रहेगी? यह सहयोग क्या कम है की बाबू जी को बुढ़ापे में विधवा बहू का बोझ नहीं उठाना पड़ रहा.

इसी अंतद्वंद में पंद्रह दिन गुजर गए. अभी दुकान का कर्मचारी एक पत्र दे गया है. खोला तो वह खुशी से चहक उठी. इंटर कालेज से न्युक्ति पत्र था. इस पत्र ने जैसे उसकी दुनियां बदल दी थी. अपने निर्णय लेने में स्वंय को समर्थ पा रही थी, ऐसा आत्मविश्वास तो उसमे कभी नहीं आया था. पापा के दुकान से आते ही उसने कहा-‘पापा आप से एक बात कहनी है.’

‘हाँ बोलो बेटी’

‘मेरी चेकबुक कहाँ है, पापा मुझे कुछ रुपये चाहिए थे।’

‘जब चाहे ले लेना तेरे ही तो हैं. रुपये बैंक से निकाल कर क्या करेगी, जितने चाहिए मुझ से ले ले।’

पापा एक बार मैं अपने ससुराल जाना चाहती हूँ। ‘आज अचानक तुझे ससुराल की याद कैसे आ गई और तू वहां क्यों जाना चाहती है?

‘पंद्रह बीस दिन पहले रास्ते में मुझे नरीश के बाबूजी मिले थे, बहुत परेशान और टूटे हुए से नजर आ रहे थे, सोचती हूँ पच्चीस हजार रुपये उन्हें दे आऊँ. वैसे भी इन रुपयों पर मेरा क्या हक है?’

‘कैसी बहकी-बहकी बातें कर रही है? रूपयों पर कानूनन तेरा हक है तभी तो तुझे सोंपे गए हैं...रुपये उनको कैसे दे सकते हैं?’

‘पापा नरीश से मेरा कितने दिनों का परिचय था?...सिर्फ पंद्रह बीस दिनों का, किन्तु बाबूजी ने उन्हें पढ़ाया लिखाया...पाल पोस कर अनेकों तकलीफ सह कर इतना बड़ा किया. आज उनके पास क्या है..सिर्फ कर्ज का बोझ?...नरीश की संपत्ति की एक मात्र स्वामिनी मैं नहीं बनना चाहती. मुझे किसी का पालन पोषण करना होता तो सोचती भी. मैं अकेली इतने धन का क्या करूंगी?...नरीश के बिना बाबू जी अपाहिज से हो गए हैं, मानो उनकी टाँगें छिन गई हों यदि मैं उन्हें कुछ सहारा नहीं दे सकती तो उनकी बैसाखियाँ छीनने का मुझे क्या हक है? इस समय धन ही उनकी बैसाखी बन सकता है...उनके यहाँ से जो गहने मुझे मिले थे वह भी मैं नहीं रखूंगी’

‘वो बूढा पट्टी पढ़ा कर तेरी बुद्धि भ्रष्ट कर गया...तेरी अक्ल पर पत्थर पड़ गए हैं...इन दिनों मैं तेरी शादी के लिए लड़का तलाशने में लगा हूँ.. शादी बिना पैसे के तो नहीं होती?... मेरे पास तो कुछ अधिक है नहीं... सोचा था तेरे पास जो कुछ है वही दे दूंगा’...पापा हांफने लगे थे.

‘पापा आप बाबूजी को दोष न दें... उन्होंने मुझसे कुछ नहीं कहा है. मैं तो अपने दुःख में ही घुलती रही, उनकी पीड़ाओं की तरफ तो मेरा ध्यान ही नहीं गया पर उनको देखने के बाद मेरा मन द्रवित हो उठा है...मैं कराह रही हूँ. यदि मैं उनके लिए कुछ करना चाहती हूँ तो इस में मेरा अपना स्वार्थ है...मेरी अंतर्रात्मा मुझे बाध्य कर

रही है. इस समय यदि मैंने उनकी मदद नहीं की तो जीवन भर आत्मग्लानि से उबर नहीं पाऊंगी. पापा अभी मैं दोबारा विवाह नहीं करना चाहती।'

'देख मणि यदि मैं तुझे रुपये या गहने वहां देने से रोक रहा हूँ तो इसमें मेरा अपना कोई स्वार्थ नहीं है...अपने समय को पहचान, व्यर्थ की भावुकता में मत पड़।'

'पापा मैं जानती हूँ आप जो कह रहे हैं, मेरे भले के लिए कह रहे हैं...आप का कोई स्वार्थ नहीं हैं. इन रुपयों के लिए तो आप भाई के भी बुरे बनते रहे हैं वरना वह कब के ले गये होते. पर पापा मैं उनको पूरे रुपये तो नहीं अभी केवल पच्चीस हजार ही भेजना चाहती हूँ, जाने दीजिये गहने अभी नहीं दूँगी, उसके विषय में बाद में देखेगे'

पापा कुछ कह पाते उससे पहले ही अचानक वहां भाई आ गये जो शायद पूरी बात सुन चुके थे, गरज कर बोले थे–'रुपये वहां भेज देगी, शादी करेगी नहीं. तुझे ऐसे ही कब तक बैठा कर रखेंगे? अभी तो खैर मम्मी पापा हैं, उनके बाद तेरा बोझ कौन उठाएगा? हमारे बस का तो नहीं है...माँ पप्पा ने तुझे सर पर चढ़ा रखा है.'

'भाई मैं आप पर बोझ न कभी थी, न हूं और न कभी रहूंगी और मम्मी पापा ने मुझे कभी बोझ नहीं समझा किन्तु मैं उन पर भी निर्भर नहीं रहना चाहती. दूसरों की बैसाखियों का सहारा आखिर कब तक लेती रहूंगी? मुझे अपना भार स्वयं वहन करना है. अपनी बैसाखी मुझे स्वयं बनना है. माँ बाप ने पढ़ा लिखा कर मुझे इतना सक्षम बनाया है कि मैं आत्म निर्भर बन सकूं. अब तक मैंने अपनी क्षमताओं को पहचाना नहीं था. अपने शहर के इंटर कालेज में मेरी नियुक्ति हो गई है, अब अपने गुजारे के लायक तो मैं कमा ही लूंगी.'

'ओ नौकरी मिलते ही इतना घमंड?. ..यह तू नहीं तेरा अहंकार बोल रहा है. बड़ों का जरा भी लिहाज नहीं है. ..कैंची सी जवान चला रही है. पापा इसे चेक बुक देने की जरुरत नहीं है. ..उसे मैं अपने साथ ले जाऊँगा.'

'यह मेरा घमंड या अहंकार नहीं बल्कि आत्मनिर्भरता से उत्पन्न आत्म विश्वास बोल रहा है. आप चेक बुक ले जाना चाहते हैं तो ले जाइये, मैं बैंक से दूसरी भी बनवा सकती हूँ. रही बात बड़ों के लिहाज की तो भैया आप तो मुझ से बस तीन वर्ष बड़े हैं किन्तु माँ व पापा आपसे २०-२५ वर्ष तो बड़े हैं ही, आप उनका कितना लिहाज करते हैं? जब भी यहाँ आते हैं, अपने शब्द वाणों से हमेशा उन्हें आहत करके जाते हैं. आप की शह पाकर भाभी भी उन से बुरा व्यवहार करती हैं जब कि माँ पापा किसी भी रूप में अभी तो आप पर आश्रित नहीं हैं. फिर आप मुझ से किस लिहाज की उम्मीद कर रहे हैं?'

न चाहते हुए भी आज शायद जिंदगी में पहली बार वह भाई से इतना बोल गई थी किन्तु अब वह बात और बढ़ाना नहीं चाहती थी.

'पापा हम इस विषय में बाद में बात कर लेंगे' कह कर वह उस कमरे से बाहर निकल आई थी. वह जानती है अब वह माँ पापा से झगड़ा कर रहे होंगे और हमेशा की तरह माँ आज भी रो रही होंगी.

बलात्कृत लड़की

-नीलिमा शर्मा

संपर्क-सी 2/133, जनकपुरी, नई दिल्ली-58, मो0: 9411547430

तुम! हाँ तुम!
मेरी कुछ भी तो नही थी
पर मैंने तुम्हारे
दर्द को,
हर पल सहा
प्रसव पीड़ा सा!!
ना जाने
कितनी बार
अपने अपनों से
तुम्हारे होने के
न होने के
प्रश्न पर
विवाद किया

तुम मेरी
कुछ भी तो नही थी!!
फिर भी
मेरी आँखे क्यों
बरस रही हैं
मेरा गला क्यों
रूंध रहा हैं
तेरे जाने से ....
तुम मेरी
कुछ भी तो नही थी

बहनें

बहनें नदियाँ हैं, बहती हैं
एक ही उद्गम से निसृत,
अलग दिशाओं में
अपने-अपने पथ निर्माण करती
उमरती-उतरती/रितुओं को
भोगती-सहती हुई
जिस ओर भी बहें,
लाती हैं दोनो तटो पर,
हर ओर,/दूर तक फैली हरियाली,
अन्न से भरी सुनहली बालियाँ,
जिसमें, सहज ही
बस जाते हैं जंगल और गाँव
गोबर-मिट्टी से
लिपे-पुते घर-आँगन
तुलसी चौरे पर/उगकर
कुछ पल ठहरा सूरज
अंधियारों से दो-दो हाथ करने को तैयार
टिमटिमाता साँझ-दीपक
चूल्हे की गुनगुनी आग
हवाओं में घुली
रोटियों की सोंधी महक
कर्म में, धर्म में, एक सी/फिर भी,
प्रत्येक का पृथक है रंग-रूप
कुछ उजले कपास सी, झक गोरी,
कुछ मलिन, मटमैली सी
कुछ मेघों सी, साँवरी/हलचल से भरी
थोरी बाहर की ओर झुकी,
अन्तः सलिला, भीतर की मुडी,
चंचला, शांत, अंतर्मुखी भी,
किन्तु, संवेदना से परिपूर्ण.
बहुत ही दुर्लभ होता है,
इनका मिलना.
जब भी मिलती हैं, काटती नहीं
एक-दूसरे को, रेखाओं की तरह,
कि बन जाये किसी एक के लिए,
सलीब,/जिस पर कीलें ठोक कर,
किसी ईसा को,
फिर मसीहा बना दिया जात.
कर्म पथ पर, चलती हुई,
जब कभी, ये मिलती हैं,
रोती हैं, हँसती हैं,
जीवन-मरु भिगोती हैं,
लेती नहीं, प्यार का नाम
बस, ढूँढ लेती है
बैठ कर बतियाने के लिए/सूखी जगह
हृदय में, संजोकर रखी
सस्कृति की साझी निधियाँ
फैल कर, संगम-स्थल पर बसाती हैं,
धरती पर पुण्यों का पावन तीर्थ
जिसमें, कल्पांत तक/कायम रहता है,
संसृति का अक्षय -वटवृक्ष

-रश्मि राजगृहार
पिता-स्व कामेन्द्र कुमार, जन्म-13.11.1976,
संपर्क-श्री संजीव कुमार, क्वाटर नं०-सी/५,
सेन्ट्रल कालोनी, मकोली फुसरो, जिला-बोकारो,
झारखण्ड-829144, मो०:7004323821,
ई-मेल-sanj_kumar69@gmail.com

छात्रा की व्यथा

गालों पर बस धरे हाथ,
खिड़की के पास बैठती हूँ।
न कुछ पढ़ने का मन करता,
न भूल से पढ़ती लिखती हूँ।
न कोषिष करूँ समझने की,
न कुछ भी पूछा करती हूँ।
इसीलिए स्कूल भी, घर क्या,
हर पल घूमा करती हूँ।
स्कूल गयीं, क्या पढ़ीं आज,
मम्मी पूछें जब ये सवाल।
चेहरा हो जाए तुरत लाल,
शाला का माँ है यही हाल।
होगा न ही कोई कमाल,
क्योंकि विभाग का बुरा हाल।
जब अध्यापक ही नहीं रहे,
न कभी करो फिर ये सवाल।
ये दुर्दिन है, ये मुश्किल है,
ये कैसे अपने शुभ दिन हैं।
अब तक जो गुरुवर आए हैं,
कुछ ही पाठ पढ़ाएं हैं।
बर्बाद समय कैसे करते,
बस आज यही समझाए हैं।

-डा. पार्वती यादव
पिता- श्री आर. आर. यादव
शिक्षा-परास्नातक शिक्षाशास्त्र
सम्पर्कः ग्रामः भगवानपुर, पोस्टः रामपुर कोलावा, जिला-ः बलरामपुर, उत्तर प्रदेश, पिनः 271201, मो0ः 07081527388
ई.मेलः parvatiyadav7388@gmail.com

इसीलिए हे प्यारी माँ,
हरदम अब मुझको मत टोको,
बर्बाद हुआ अब ये जीवन,
कुछ भी करने से मत रोको।।

नींद बेचना और खरीदना

टच स्क्रीन के मोह में जुटी पूरी दुनिया
भाव शून्य से वक्त पर/न देख रही है
न पढ़ रही है/न समझ रही है
ना ही उड़ेल रही है भाव/भाव भीतर प्रकोष्ठ में
चार-पाँच अंत देखने के बाद बाहर बह आते है
बौद्धिक स्तरीय ऊबाऊ अस्तित्व
बिकाऊ होना पसंद करते है
हम करते है पसंद पूरा होना आसान टुकड़ों में बटे होकर
और पूरी होती है छत छत के बिना
जैसे हो जाती है दीवार पूरी नेह के बिना
पूरा होता है एक समुद्र कहते पानी पानी
हम उड़ते हैं आसमान में पंखों बिना
बेलती है रोटी में एक औरत पूरा चाँद
जैसे शब्दों में देख लिया है हमने होना गरीब
आँसू का मतलब और भूखे होने की समीक्षा
हम नमक का मतलब जान जाते है तकिए में भीगी रात से
नींद बेचना और खरीदना
जैसे आँखों को खोलना और बंद करना नाटक भर है
हम प्रेक्षागृह के अंधकार में रोशनी उलीच रहे होते है
देखने सत्य/मिथ्या धारणा के साथ
जहाँ देखना एक भ्रम है
और पूरे भ्रम के साथ जीना एक कला।

-रीता दास राम
जन्म-12.06.1968, शिक्षा-एम.ए, एम.फिल (हिन्दी), पी.एच.डी.
सम्मान-'शब्द प्रवाह साहित्य सम्मान', अभिव्यक्ति गौरव सम्मान',
'हेमंत स्मृति सम्मान'
संपर्क-34/603, एच.पी. नगर पूर्व, वासीनाका, चेंबूर,
मुंबई-400074. मो- 09619209272

मेरी ख्वाबों की बगिया में

मेरी ख्वाबों की बगिया में, तुम फूल बन खिले हो
मिल के सांसों को मानिन्द गुलाब की महकायेंगे
उड़ती हुयीं तेरी काली जुल्फें घटाएं याद दिलायेंगी
तेरे बदन की खुशबु मंद बयार में घुल नहलायेंगीं
नक्षत्रों में मौन विचरते तन्हा चाँद नहीं हो तुम
फिजाओं में मंदिर की घंटी सी तुम्हारी हँसी गूँजेगी
मूँद कर तुम पलकें, जब जब अपने अंदर झाँकोगे
दिल की गहराईयों में, तुम्हें हम ही नजर आयेंगे
एक दिन हम चले जायेंगे, निशानी यहीं छोड़ जायेंगे
तुम किताबों को सहेज लेना, किस्सों में मशहूर हो जायेंगे

- **मंजु शर्मा,** शिक्षा-स्नातक,
ईमेल-mnjs64@gmail.com मो०-९४०३२८५३०१

रोटी बनाती स्त्रियाँ

राजे थोड़ा-थोड़ा
विश्वास के आटे में
समर्पण के छीटे देती
स्नेह/आत्मीयता भरी हाथों से
गूँथती हैं आटा
प्रयत्न की छोटी-छोटी गोलाकार लोई
रख देती हैं बारी-बारी से
यथार्थ की चकले पर
धैर्य के बलेन से बेलती
और तमाम
आक्रोश/पीड़ा/घुटन/उदासी
हो जाते मुक्त
तन, मन की थकान से परे
नये उत्साह से
जीवन के गर्म तवे पर
रखती जाती
गीली, कच्ची रोटी
हौसले के चिमटे से
उलटती, पलटती
धीरे-धीरे
मध्यम आँच पर सेकंती
और फिर
सोधापन एवं पूर्णता के लिए
डाल देती उसे
परिस्थिति की
धधकती आग पर
चुनौती की तरह।
हाँ, कुछ इसी तरह
रिश्तो को तृप्त करती
लगन से, मगन हो
बनाती है स्त्रियाँ
गर्म, नर्म रोटियाँ

-पूनम सिन्हा, 'श्रयेसी'
शिक्षाः स्नातकात्तर (जन्तु विज्ञान)
सम्प्रत्ति- स्वतन्त्र लेखन
सम्पर्क-द्वारा श्री नरेन्द्र कुमार सिन्हा, अपर समाहर्त्ता, सह जिला लोक शिकायत निवारण पदाधिकारी, अरवल, अपर समाहर्ता आवास, ब्लॉक रोड, जिला-अरवल, बिहार-८०४४०१,
मो०ः ८३४०४८४८६६

बनाती है स्त्रियाँ
गर्म, नर्म रोटियाँ।

लघु कथाः

सही सलाह

रायचरण अपनी पत्नी और अपने तीन बेटों के साथ रामपुर गांव में रहते थे. उनके पास थोड़ी पैतृक जमीन थी जहां खेतीबारी कर अपने परिवार का भरण पोषण करते थे. उनके तीन बेटे थे और तीनों पढ़ाई में काफी तेज थे. रायचरण बाबू आर्थिक स्थिति ठीक नहीं थी बड़ी ही मुश्किल वे अपने बेटों को शिक्षित कर रहे थे. खाली समय अपनी सिलाई मशीन पर दूसरों के फटे पुराने कपड़े भी सिला करते थे. काफी कर्मठ और मेहनती थे रायचरण बाबू परन्तु उन्हें बीड़ी पीने की एक बुरी लत थी.

धीरे-धीरे समय बदला रायचरण बाबू के बड़े बेटे की प्रोफेसर के पद बहाली हुई और बाकि दो बेटे शिक्षक के पद पर नियुक्त हुए. घर की आर्थिक सुधार होने लगी. रायचरण बाबू की भी तरक्की हो चुकी थी अब वे बीड़ी के बजाय सिगरेट के शौकीन बन चुके थे. और अपने शानो-शौकत की नुमाईस करते थे.

एक दिन उनके गांव में उनके चचेरे भाई के एक मित्र पहुँचे जो पेशे से एक डाक्टर थे. वे गांव के गरीब मरीजों का निशुल्क ईलाज करते थे. रायचरण बाबू भी उनके पास अपना ईलाज कराने पहुँचे. डाक्टर साहब ने उन्हें धूम्रपान बंद करने सलाह दी. डाक्टर साहब बात को सुनकर रायचरण बाबू बोले- 'अभी तो सुख के दिन आए हैं डाक्टर साहब मुझे सिगरेट पीने न रोकें.' डाक्टर बाबू ने इस बात का उत्तर देते हुए कहा- 'धूम्रपान स्वस्थ्य के लिए हानिकारक है आपके सुख के दिन दुःख परिणत हो सकते हैं.'

-विनीता चौल
संपर्क-बुंडू चौक बाजार काली मंदिर, रांची, झारखण्ड-८३५२०४

ख्वाहिशें

आने वाली पीढ़ियों के लिए-
मेरे पास कुछ भी नहीं जो,
छोड़ कर जा सकूं।
न पावर, न पैसा,
न सामने वालों के जैसा।
पर करूं भी तो क्या?
ताउम्र कीचड़ से लथपथ हाथ,
और फटे कपड़ों के चिथड़ो में-
खुद को निहारा।
बस! इसी तरह किया मैंने-
आजीवन गुजारा।
खेतों में बीज के बिछड़े बोते-बोते
अनगिनत ख्वाहिशें इन फसलों के
सदृश लहलहा उठती थी।

पर गरीबी की सच्चाई से-
कराह उठती थी।
अब अनगिनत अनुभवों की
झुरियो के बीच-
एक छोटा-सा कवि मन पर
बारम्बार पीड़ा के हथौड़ों-
से प्रहार पर प्रहार होता
और मन कुचल जाता
कुचला मन और कुंठित गला से-
कुछ स्वर प्रस्फूठित होता
और वह वेदना भरी
अनगिनत गीत बन जाती।
शायद मैं यही गीत छोड़कर
धरोहर के रूप में जाऊंगी।

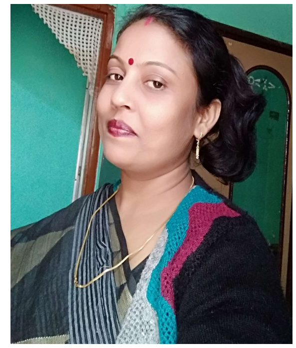

-नितु गुप्ता
पति का नाम- ओमप्रकाश गुप्ता
जन्मतिथि-३ अक्टूबर १९८४
संपर्क-ओमप्रकाश गुप्ता, पार्वती निवास, शिव कालोनी (महावीर कालेज के सामने) घुघडीटांड बाईपास, गया, बिहार-८२३००१
मो०-८२१०३०५२६८, ६०६७०८१५७७

सबक

रूह थी काँप गई,
मौत से रूबरू हुई,
जिंदगी थी छिन गई,
कैसी कश्मकश हुई
वो तेजाब के छींटे,
अब तक हैं जिंदा
न जाने उनकी,
ये कैसी बात हुई
मौत से जीती हूँ,
मुझे हारने को कहते हैं
जिंदा हूँ तो,

क्यों मर जाने को कहते हैं
उनके स्मरण से
मैं काँप उठती हूँ
उनका हर निशान
मुझको रुलाता है
उनका हर ताना
मुझको गिराता है
मगर उनसे मैंने
उठना जान लिया है
तू चाहता था मैं रोती ताउम्र
अब मैंने हँसना जान लिया है
रोने को आँसू नहीं मेरे पास
बस हँसने को है मुस्कान
और तेरी हार के लिए
मेरी मुस्कान ही है
मेरा हथियार
मेरी भी है एक पहचान
दबने नहीं दूँगी उसे
मेरी भी है अपनी जिंदगी
मरने नहीं दूँगी उसे
आगे बढ़ूँगी,

कु० दिव्य सृष्टि 'दिव्या'
माता-पिताः श्रीमती दयावती, श्री सुभाष चन्द्र,
जन्मः 28.07.2004,
सम्पर्क-1/300, सुहाग नगर, फिरोजाबाद –283203, उ.प्र., मो० : 8535038640

सबसे आगे
सब जानेंगे,
मुझे तेरी बदौलत
मैं सबके लिए उदाहरण बनूंगी
तुझसे भी सीखा है एक सबक
भरोसा तो करना चाहिए
जिंदगी में
लेकिन
भरोसे की एक
हद भी होंनी चाहिए

लघु कथा प्रतियोगिता

इस प्रतियोगिता में देशी-विदेशी कोई भी हिन्दी सेवी सहभागी हो सकता है। यह प्रतियोगिता तीन चरणों में सम्पन्न होगी। अंतिम चरण में सर्वश्रेष्ठ प्रतिभागी को रुपये ५०००/रुपये प्रदान किए जाएंगे। अंतिम चरण के सभी प्रतिभागियों को प्रमाण पत्र दिया जाएगा। कृपया फोन कर जानकारी ना मांगे, अणुडाक(ई-मेल) या व्हाट्सएप पर आवेदन करें पूरा विवरण नियम एवं शर्तो सहित प्रेषित कर दिया जाएगा।

नियम एवं शर्तें

०१ प्रतिभागी को एक लघुकथा जिसकी शब्द सीमा अधिकतम ३००(तीन सौ शब्दों) से अधिक की न हो मौलिकता के प्रमाण पत्र के साथ भेजनी होगी।

०२ प्रथम चरण में इन लघुकथाओं को एक पुस्तकाकार में प्रकाशित किया जाएगा। जिसकी एक प्रति साधारण डाक से प्रतिभागी को भी भेजी जाएगी।

०३ पाठकों की राय के आधार पर सर्वश्रेष्ठ दस का चयन किया जाएगा। जो द्वितीय चरण के प्रतिभागी होगें।

०४ द्वितीय चरण के प्रतिभागियों की लघुकथा को विश्व स्नेह समाज मासिक के जनवरी अंक में भी प्रकाशित किया जाएगा। जिसमें पाठकों की राय एवं तीन सदस्यीय निर्णायक मंडल के निर्णय के आधार पर सर्वोच्च एक का चयन किया जाएगा।

०५ विजेता को फरवरी २०१८ में आयोजित होने वाले साहित्य मेला २०१६ के सुअवसर पर यह विजेता का प्रमाण पत्र व निर्धारित राशि प्रदान की जाएगी।

०६ प्रतिभागी को लघुकथा के साथ एक फोटो, नाम, पिता का नाम, जन्म तिथि, योग्यता तथा रुपये दो सौ का धनादेश/चके /डीडी 'सचिव, विश्व हिन्दी साहित्य सेवा संस्थान, इलाहाबाद' के नाम से भेजनी होगी।

आवेदन की अंतिम तिथि १५ नवम्बर २०१८

सचिव, विश्व हिन्दी साहित्य सेवा संस्थान,

६५ए/२, रामचन्द्र मिशन रोड, लक्सो कंपनी के सामने, मुण्डेरा, इलाहाबाद-२११०११

सं0: (वाट्सऐप) 9335155949, 9264964112

sahityaseva@rediffmail.com, hindiseva15@gmail.com

विश्व हिन्दी साहित्य सेवा संस्थान द्वारा प्रकाशित पुस्तकें